जरायुज इन चार प्रकार की सृष्टि मैंने पैदा की है उसमें जरायुज या पिण्डजों में ये मनुज बड़े चतुर सयाने निकले कि एक नहीं पांच अमृत की कल्पना कर मेरा सब कारखाना उलट दिया चाहते हैं इसलिये ये ५ महाहालाहल मेरा मतलब पूरा कर देने में बड़े उपकारी होंगे और पांचो महाविषों का नाम करण उसने इस भांत किया-पहिले का स्वार्थसाधन कहा "स्वार्थं समुद्धरेत्प्राज्ञः स्वार्थभ्रंशोहिमूर्खता" बुद्धिमान् वही है जो स्वार्थसाधन में न चूकै-संसृति का परिचालक बिधाता ने सोचा यह तो मेरे बड़े काम का होगा इन दिनों कूड़ा करकट की भांत हिन्दुस्तान में तालीम की झलक पाय ऐसे २ लोग उपजे हैं जो देशहित का रोला मचाये हुये हैं और निज स्वार्थ को भंग की शिक्षा दे रहे हैं इसीलिये श्लोक का दूसरा टुकड़ा कह रहा है अपना स्वार्थ बिगाड़ना निरी मूर्खता है ॥

दूसरे विष का नाम करण विधाता ने "पार्टीफीलिंग" किया और यह स्वार्थसाधन का बड़ा सहायक है-लोग किसी तरह स्वार्थ त्याग लोकोपकार के बहाने कुछ करने भी लगते हैं तो जल्द दो दल हो जाने का ऐसा अड़चन उनमें आ लगता है कि फिर आगे बढ़ना कठिन हो जाता है--वैष्णव शैव शाक्त आदि सांप्रदायिक झगड़े इसी पार्टी फीलिंग के अंग पहले भी थे जिन सांप्रदायिक झगड़ों से देश का पिछले ज़मानों में कैसा सत्यानाश हुआ है--वही अब भी बड़ी २ सभ्य समाजों में अपना दखल जमाये है--कोई सभा कमेटी या जमात नहीं देखी गई जिसमें कुछ दिन के उपरान्त दो दल न हो गया हो और अन्त को जिस उद्देश्य पर वह समाज चलाई गई थी उसमें बड़ा विघ्न न हो गया हो तस्मात् यह भी उस संसृति का महोपकारी है--

तीसरे का नाम "हेरिडेटरी" परंपरागत किया-यह ऐसा उल्वण विष है कि बड़े २ संशोधक और उपदेशक दांत पीस रह जाते हैं और पछताते हैं कि हाय हमारी हिन्दूजाति को यह कहां का दुराग्रह घेरे

हुये हैं जिस्से हम लोग कोई नई बात करी नहीं सक्के नये का नाम सुनते ही लोग छनक उठते हैं-दासत्व की शृंखला में जकड़े रहने को यह परंपरा गत बड़ा अच्छा सहाड़ा है-इस परपरा से पिण्ड छुटाने को बंगाल में राजा राय मोहन नें बहुत कुछ प्रयत्न किया पर उन की एक न चली कतिपय इने गिने लोगों को छोड़ उन का कहना सर्व संमत न हुआ-जिन्होंने उन के कहने पर कान दिया वे जन समूह से अलग कर दिये गये और वह समाज ही ब्रह्म समाज और धर्म ब्राह्म धर्म कहलाया-ऐसा ही इधर के लोगों को राह पर लाने को स्वामी दयानन्द उठ खड़े हुये और वेद की ऋचाओं का अर्थ पलट २ बहुत चाहा कि परंपरागत दुर्वासना दूर करें। किन्तु पूज्य पाद भगवत शंकराचार्य के समान सर्वमान्य सर्वग्राह्य न हुये-जिन्होंने उन के कहने की पैरवी की अन्त को उन का एक अलग दल आर्य समाज के नाम से कहलाया पीछे पार्टी फीलिंग ने भी जाय इस दल को ऐसा रगेदा कि घास पार्टी और मास पार्टी दो दल इस में हो गये तो सिद्ध हुआ यह परंपरा संसृति का महोपकारी है-यह परंपरा भूतिन का प्रभाव है जो लंठ दासों को मालामाल कर रही है-पण्डे पुरोहित और पाधा पुजाते हुये गुलछर्रे उड़ाते हैं पढ़े लिख विद्वान् संयमी सच्चरित्र कड़ाके पै कड़ाके करते मुंह बांधे बैठे रहते हैं-इस परंपरा से देश में जैसा संस्कृत के पठन पाठन की रेढ मारी गई वैसा किसी दूसरे कुसंस्कार से नहीं—अच्छे २ संपन्न धनवानों के घरानों में परंपरा से जिन्हें मानते आये उन्हें ही मानते रहेंगे तब ये पुजवानेवाले पण्डे या पुरोहित क्यों पढ़ने लिखने में परिश्रम कर अपने आराम और सुख में खलल छोड़ैं-बछिया पुजैानी विद्या संस्कृत को सिवाय दान दक्षिणा के दूसरा कोई सहारा नहीं पढ़ैं तो भूखों मरैं तब ब्राह्मणों में किसे शामत सवार जो पढ़ै-इस न पढ़ने का हमारे ब्राह्मणों में यह परिणाम हुआ कि १०८ में १० ऐसे निकलेंगे जिन्हें गायत्री और सन्ध्या तर्पण आदि द्विज कर्म

आता होगा-क्या कहना कैसा अच्छा परिणाम इस परंपरा पिशाची का प्रजा में फैल रहा है—अब रहे दो महाविष दंभ और दर्प उनके महत्व की कथा हम अपने श्रोताओं को फिर कभी सुना देंगे दंभ की गीत तो हम कई बार कई तरह पर आगे गा भी चुके हैं अस्तु ॥

——

विरक्तों में विद्यानुराग ।

यहां व्याघ्राम्बरी नाम का एक पुराना मठ है, आदि पुरुष इस मठ के व्याघ्राम्बरी जी बड़े महात्मा हो गये हैं-इस समय इस मठ के उत्तराधिकारी पुरुषोत्तमगिरि विद्या के बड़े अनुरागी मालूम होते हैं एक बार पहले ये संस्कृत की पाठशाला भी स्थापित कर चुके हैं इस बार महासभा के अधिवेशन में आये हुये काशी के पण्डितों का यथा-शक्ति अच्छा सत्कार इन्हों ने किया—सौ पण्डितों को एक एक रुपया और एक वस्त्र दे सबों के साथ बड़े विनीत भाव का बर्ताव किया-इस तरह के यहां कई एक अखाड़े और मठ हैं जो वैभव और संपत्ति में बहुत अधिक हैं-पर उन अखाड़े के महन्तों को यह कभी नहीं सूझता कि इस तरह की बातें कभी करें फकीर होकर भी अमीरों का कान काटना भलेही सीखे हैं-व्याघ्राम्बर मठ के अधिष्ठाता पुरुषोत्तम-गिरि अवश्यमेव सराहना के योग्य हैं जो साल में दो एक बार इस प्रकार का भला काम कर गुज़रते हैं धन्य हैं! ॥

——

दृढ़ संकल्प ।

"अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे नदैन्यं नपलायनम्" संकल्प की कैसी दृढ़ता इस वाक्य में प्रगट हो रही है "अर्जुन की दोही प्रतिज्ञा है न दीन होना न रण से पीठ फेरना" दीन हो गिड़गिड़ाते और शत्रु को देख भाग जाते तो अर्जुन में फिर बीरता ही क्या रह जाती-इसी संकल्प की

दृढ़ता से कौरवों के सैन्य सागर को अर्जुन गोष्पद समान तैर के पार हो गये और भारत के युद्ध में भीष्म द्रोण करण आदि महारथियों को जीत अपनी विजय पताका गाड़ दिया—नेपोलियन बोनापार्ट वीराग्र गण्य महाविजयी क्यों हुआ इसी से कि वह अपने विचार और संकल्प का बड़ा दृढ़ था—कहावत चली आ रही है "तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजी बार" यह हठ और है क्या यही सिद्ध संकल्प और इरादे का पक्का होना—दुर्बल चित्तवाले के मन में कभी धसैहीगा नहीं कि यह सकल्प की दृढ़ता है क्या बला-लाख और करोड़ में कोई ऐसे बिरले पुरुष सिंह उपज खड़े होते हैं—कोई ऐसी वीर प्रसविनी माता हैं जो इस तरह के संस्कारी पुत्र पैदा करती हैं—बहुत विद्या पढ़ने से अनेक भाषा जानने से विविध विज्ञान में प्रवीणता से यह उत्कृष्ट गुण मनुष्य में नही आता किन्तु न जानिये क्यों देश और जाति के सौभाग्य के उदय होने पर यह विशिष्ट भाव मन में जिस किसी के आप से आप आ जाता है—जिस समय किसी नेशन का उदय रहता है तब उस जाति में अनेक बरन शतसः इस तरह के महापुरुष उस में उपज खड़े होते हैं और निरन्तर ऐसे लोग जो महान् कल्याण के रूप हैं होते रहते हैं—हम कई बार अपने कई एक लेख में इसे दिखा चुके हैं कि हमारे पहले के ऋषियों में ऋषित्व या तपोबल और क्या था यही सिद्ध संकल्प या बिचार की दृढ़ता का होना और यह ऋषि परंपरा हिन्दुस्तान में दो हज़ार वर्ष पहले तक कायम रही—बौद्धों का ज़ोर होना कि ऋषि परंपरा का उच्छेद हो गया और तब से हमारी तन-ज्जुली बराबर अब तक होती ही जाती है—ऐसा मालूम होता है कि केवल वीर्य की रक्षा का इस के साथ कोई बड़ा गाढ़ा सम्बन्ध है—देश से ब्रह्मचर्य का उठ जाना हमारा बड़ा हानिकारक हुआ और अब तो उर्द्ध रेता कहीं रहे ही नहीं जब १२ वर्ष की उमर से आजन्म दुखी दम्पति का बिवाह हो जाने से वीर्यस्राव शुरू हो जाता है—यूरोप के

देशों में अब भी दृढ़ अध्यवसाय और दृढ़ संकल्प वाले हैं सो इसी से कि वहां प्रौढ़ अवस्था तक वीर्य रक्षा रहती है यद्यपि वे हम से बहुत अधिक भोगलिप्सू हैं किन्तु परिपक्क अवस्था में दोनों का दांपत्य संयोग किया जाता है तो उनके बल बुद्धि साहस विचार की गम्भीरता स्थिर अध्यसाय में कसर नहीं पड़ती–बहुत लोग सात्विक आहार को भी इसका हेतु मानते हैं सात्विक भोजन और सात्विक आचार में भी कदाचित् यह शक्ति हो किन्तु वीर्य रक्षा के सदृश नहीं सो वीर्य रक्षा की यहां जड़ कटी हुई है तब दृढ़ संकल्प प्रजा में क्योंकर जगह पा सक्ता है "लतायां पूर्व लूनायां कुसुमस्यागमः कुतः" लाचारी है ॥

संस्कारजन्य और अभ्यास ।

संस्कारजन्य और अभ्यास दोनों जुदी २ बातें हैं–इन दोनों का ऐसा ही अन्तर है जैसा Nature and Art स्वाभाविक और कृत्रिम में है–कृत्रिम कभी २ स्वाभाविक को मात कर देता है किन्तु बहुत बातों में स्वाभाविक कृत्रिम को बढ़ने ही नहीं देता जैसा कवि की प्रतिभा जैसी उत्तम संस्कारजन्य है वैसी कृत्रिम नहीं–कालिदास की प्रतिभा को कवि मण्डली आज तक तरस रही है– इसे संस्कारजन्य कहो या ईश्वर की देन Geft कहो किसी पुरुष विशेष में कोई ऐसी विच्छित्ति विशेष आ जाती है जो सर्व साधारण में हज़ार बार अभ्यास करने पर नहीं आती–हमारे यहां किसी २ लोहार या बढ़ई में कोई स्वाभाविक विच्छित्ति विशेष ऐसी है कि कितने काम जो वे बना देते हैं उसे देख विलाइत के बड़े कलाकोविद Artist जिन्होंने वर्षों तक कारीगरी की विद्या स्कूलों में सीखी है दंग हो जाते हैं–रविवर्मा में जो चित्रकारी की असाधारण प्रवीणता है उसे भी हम यही संस्कारजन्य कहेंगे–नेपोलियन या रणजीतसिंह में विश्वविजेता बनने की शक्ति भी वही इश्वरीय देन थी ऐसाही न्यूटन ने जो आकर्षणशक्ति प्रगट किया

जेम्स वाट ने भाफ की ताकत ज़ाहिर किया जिस से इस समय संसार का कितना उपकार साधन है यह सब भी वही संस्कारजन्य हम मानेंगे-साधारण सी साधारण बात जो प्रति क्षण हुआ करती हैं उस ने इन बड़े लोगों के मन में इस तरह पर जगह कर लिया और उस पर बुद्धि दैाड़ाय ऐसे भारी २ सिद्धान्त और उसूल निकाले जिन से संसार का रूप एक प्रकार और का और हो गया यह सब उसी अद्भुत शक्ति का कार्य है जिसे हम संस्कारजन्य कहैंगे पीछे फिर उस पर अभ्यास ने उसे और अधिक बढ़ाया और उसको विशेष उन्नति पर पहुंचाया-डेग के ऊपर का बर्तन जिस्से डेग का मुंह ढांपा हुआ था भाफ से हील खटखटाते हुये हम सब लोग प्रति दिन देखा करते हैं पर किसी को इस पर कोई कैातुक नहीं होता न कोई इस को ख्याल करता है जेम्स वाट को यह अत्यन्त कैातुकावह जो वोध हुआ उसे हम संस्कार ही मानेंगे ऐसा ही सेव के फल का पेड़ से नीचे को गिरना न्यूटन को कैातुकावह हुआ इत्यादि बड़ी २ ईजादों के प्रथम प्रवर्तक सब संस्कारी जीव थे अभ्यास ने पीछे उसे शतगुण बढ़ाया ॥

पुस्तक प्राप्ति

भारतमित्र का उपहार ।

हर साल भा-मि-वार्षिक मूल्य २) से १) अधिक लै निज ग्राहकों को उपहार दै विनोदित करता है-यह उपहार चार पुस्तकों में करीब ४८० पेज के है-एक तो भारतमित्र योंही जितने साप्ताहिक पत्र सबों में चढ़ा बढ़ा है, इस के संपादक की लेखचातुरी और टटकी से टटकी खबरों को पढ़ कौन न सन्तुष्ट होता होगा दूसरे यह उपहार तो मानो सोना में सुगन्धि हो गया है-इस वर्ष के उपहार में ४ पुस्तकें हैं ॥

१ली जहांगीरनामा ।

जिस को मुन्शी देवीप्रसाद जी मुनसिफ जोधपूर ने बड़े परिश्रम से संग्रह किया है-बादशाह जहांगीर ने अपना सब हाल अपने ही हाथ से फारसी भाषा में सविस्तर लिखा है उसी को मुन्शी जी ने संग्रह कर इतिहास प्रमियों की इच्छा पूर्ण की है ॥

२री स्फुटकविता ।

इस पुस्तक में इस पत्र के सम्पादक बाबू बालमुकुन्द गुप्त जी की हिन्दी में कुल तुक वन्दियों का संग्रह है इस की तुक बन्दियां भी कहीं २ बड़े ही मज़ेदार हैं जिस में दो एक खड़ी बोली की कविता तो अति रोचक है ॥

३री दशकुमार चरित्र ।

जिस को कलकत्ते के श्री विशुद्धानन्द विद्यालय के संस्कृत अध्यापक पं० अक्षयवट मिश्र ने अति सरल हिन्दी भाषा में उपन्यास के रूप में लिखा है इस गद्य काव्य का और भी हिन्दी अनुवाद हुआ है पर भाषा जैसी इस की सरल है दूसरे अनुवाद की नहीं ॥

४थी शिव शम्भु का चिट्ठा ।

दिल्ली दरबार से अब तक में शिव शम्भु शर्मा ने लार्ड कर्ज़न को कई हास्य मय पत्र लिखे थे जो भारतमित्र में समय २ पर छपता था वही अब अलग पुस्तकाकार छाप कर उपहार में दिया गया है यह चिट्ठा लोगों को इतना रुचा कि इस का अंगरेज़ी में तर्जुमा हुआ है ॥

उर्दू बेगम ।

बी उर्दू भाषा को धानी रंग का दुपट्टा ओढ़ाय प्रिया के रूप में बना एक अति मनोहर उपदेशावह हास्य मय उपन्यास लिखा गया है जिस में बी उर्दू के चटक मटक दार चरित्र का चित्र अच्छा खींचा गया है-साथ ही साथ कुछ उर्दू के प्रेमियों का भी चित्र इस में खींचा

गया है जिस को एक बी० ए० ने लिखा है और पं० अमरनाथ शर्मा के प्रबन्ध से एडवर्ड प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ है पुस्तक व्यंग युक्त सब के पढ़ने योग्य है मूल्य ॥)

लिपि बोध।

इस पुस्तक के दो खंड हैं पहिले में हरेक अक्षरों के आकार कई तरह के दिये गये हैं जिस का नाम आकृति खंड है दूसरे खंड में उन्हीं हरेक अक्षरों के बनाने या किस तरह से बनाये जाते हैं इस का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है-इस के सिवाय हरेक अक्षरों की उत्पत्ति कि पहले उन का क्या रूप था और फिर क्या क्या हुआ आदि बातों को मसवानपूर-कानपूर निवासी लालता प्रसादात्मज गौरी शंकर ब्रह्मभट्ट ने बड़े श्रम से रचा है और इस ढंग की पहिली पुस्तक कदाचित् हिन्दी भाषा में रची गई है जो सब के उपयोगी वा संग्रह योग्य है-चित्र विद्या सीखने वालों को इस पुस्तक से बहुत कुछ सहायता मिल सकती है मूल्य आकृति खण्ड का मय डाक महसूल १) और विवरण खण्ड का मूल्य मय पोष्टेज ॥=) है॥

नेपोलियन की जीवनी।

इस जीवनी का आदि काण्ड कलकत्ते के श्री विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालय के प्रधान अध्यापक पाण्डेय उमापति दत्त शर्मा बी० ए० ने एबाट्सलाइफ आफ् नेपोलियन का अविकल हिन्दी अनुवाद किया है और हिन्दी ट्रान्सलेटिङ्ग कम्पनी कलकत्ता द्वारा यह पुस्तक प्रकाशित हुई है निस्सन्देह आज दिन ऐसों ही की जीवनी पढ़ना चाहिये जिसे पढ़ कर लोग कुछ तो आलस्य निद्रा छोड़ें-भाषा सर्व साधारण के पढ़ने योग्य कुछ और सरल हिन्दी होती तो अच्छा था मूल्य ।) आना॥

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ }
सं० ३ }

प्रयाग

{ मार्च
{ सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज ३)

—:००:—

हिन्दीप्रदीप

जि० २८ सं० ३ — प्रयाग — मार्च सन् १९०६ ई०

तीर्थों की तीर्थता।

पुण्य पुंज तीर्थीभूत जिन महात्माओं के नाम से या जिन की याद-गारी में इतने तीर्थ नियत किये गये हैं वे न जानिये कैसे महापुरुष रहे होंगे कि युगानयुग समय बीत जाने पर भी उस तीर्थ का महत्व अब तक बना है-श्रद्धालू विश्वास रखने वाले के मन में तीर्थ की पुण्य भूमि में पहुंचते ही कैसे २ पवित्र भाव उदय होते हैं वरन कलु-षित हृदय के लोग भी थोड़ी देर के लिये वहां पहुंच सात्विक प्रकृति के हो जाते हैं—जन्म पर्यन्त जो वैसी ही तबियत उन की बनी रहे तो उन के जीवन्मुक्त होने में कोई सन्देह न रह जाय-तीर्थों में यह

असर देख प्रश्न उठता है कि इन तीर्थों में कौन सी ऐसी बात है जिस का इतना प्रभाव है—कितनों का मत है कि इस तीर्थता की कोई और बात नहीं है वरन Association of idias. वहां पहुंच भूत पूर्व वहां के वृत्तान्त या वहां के पुण्य पीयूषवारिधि समान उन महापुरुषों का स्मरण जिन के सुकृत का अखाड़ा वह भूमि है तीर्थता कही जायगी—जिन का मन सदा सुकृत की ओर झुका है पाप और किल्विष से कलुषित न हो सदा पवित्र वायु के संपर्क से हरा भरा और तरोताज़ा है उन्हें तीर्थ क्या पवित्र करेगा वरन वेही उस तीर्थ में जाय उसे पवित्र कर देते हैं जैसा कहा है ॥

"प्रायेण तीर्थाभिगमापदेशैःस्वयं ।
हि तीर्थानि पुनन्ति सन्तः" ॥

गंगा जी स्वयं कहती हैं ऐसा पुरुष कब आय स्नान से मुझे पवित्र करेगा जो पराई स्त्री परायाद्रव्य पराये द्रोह से मुंह फेरे हुये है ॥

"परदार परद्रव्य परद्रोह पराङ्मुखः—
गंगा ब्रूते कदागत्य मामयं पावयिष्यति" ॥

और भी "शुचिमनो यद्यस्ति तीर्थेन किम्" मन पवित्र है तो तीर्थ से क्या "आत्मैवतीर्थं शुचिमानसानाम्"—तात्पर्य यह कि तीर्थ में तीर्थता संपादन करने वाले ऐसे ही सात्विक जन हैं जो मन के पवित्र हैं—ऐसे महापुरुष केवल तीर्थ में तीर्थता संपादन के हेतु हुये तो कौन सी बड़ी बात हुई अपिच ऐसों से तो समस्त जनपद पवित्र है जहां होंगे उस देश या भूमि को सनाथ किये होंगे—जिस देश या काल में ऐसे लोग अधिक हों वही देश तीर्थ और काल पुण्य काल है—दान शील श्रद्धालुओं को चाहिये ऐसे पुण्य तीर्थ और पुण्य काल को हाथ से न जाने दें जहां तक हो सके इस का लाभ उठावें। अनधिकारियों में दान का असद्व्यय कर पुण्य के बदले पाप न बटोरें—

हमारे यहां ऐसे विवेकी दानियें के न रहने ही से देश निरन्तर क्षति ग्रस्त होता जाता है-इस भूमण्डल में यूरोप और अमरिका के कई एक देशों का सिर ऊंचा है और समस्त जन समूह में उस देश में जो जाति बसती है वह सब के ऊपर चमक रही है सो इसी से कि उन के बीच ऐसे विवेकी दान शील विद्यमान् हैं-दानियें की कमी हमारे यहां भी नहीं है पर विवेक नहीं है तो "विवेक भ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः" देश का देश नीचे को गिरा जाता है और अनधिकारियें में उन के कुढंगे दान से तीर्थ की महिमा भी घटती जाती है यही लीला जो कुछ दिन और रही तो इन पुण्य तीर्थों पर श्रद्धा काहे को बाकी रह जायगी-और २ देशों में धर्म संबन्धी या समाज संबन्धी बातें में उपयोगिता Utility. का बहुत ख्याल लोग रखते हैं हमारे यहां भी जितनी बातें धर्म या समाज से सम्बन्ध रखती थीं सबों में उपयोगिता पर ध्यान रहा। ऋषियों ने जिस का जब जैसा उपयोग समझा तब तैसा उसे प्रचलित किया अब वही Custom. निरा प्रचार से उस का बर्ताव देखा जाता है-अन्ध परम्परा में जो चल पड़ा सो चल पड़ा तले तक दृष्टि फैलाय उस के उपयोग पर किसी का ध्यान जाता ही नहीं जिस किसी ने उपयोग पर नज़र दौड़ाया तो "यद्यपि शुद्धं लोक विरुद्धम्" उपस्थित हो ऐसा गला घोटने लगता कि उस तत्व जिज्ञासू की एक नहीं चलती और यह प्रचार ही अब इस समय हमारा धर्म कर्म आचार विचार रहन सहन सब कुछ हो रहा है-धन्य अज्ञता महाराक्षसी तेरा बोल बाला रहे तू साम्प्रत बड़ा उपकार कर रही है नहीं तो यह अभागा भारत कभी का उठ खड़ा होता "कस्टम्" प्रचार के नाम से हज़ार मन का पत्थर लिये तू भारत की छाती पर सवार रिवाज की गुलामी में तत्पर है ॥

——

रिवाज की गुलामी।

रिवाज की गुलामी भी क्या ही मज़ेदार चरपरी चटनी है हम चाहते हैं आज अपने ग्राहकों को इस का ज़ायका चखाते चलैं। यावत् विज्ञान दर्शन और तर्क सब इस रिवाज राक्षसी का मुंह जोहते रहते हैं। वैज्ञानिकों की टटकी से टटकी ईजाद दार्शनिक और तत्व वेत्ताओं के गम्भीर से गम्भीर सिद्धान्त रिवाज के अनुकूल हुए तो सब भांत माननीय और शिरोधार्य हैं, प्रतिकूल हुए तो चाहो वेद वाक्य भी क्यों न हो त्याज्य है-देवदूत, नबी, फरिश्ते, आचार्य, गुरु, उपदेष्टा सबी अपनी २ नबूअत, उपदेश, और वाज़ के लिये रिवाज का सहारा ढूंढ़ते रहते हैं Hereditery. परम्परागत रिवाज का पृष्ठपोषक या पुश्त पनाह बन इस में दूनी दमक पहुंचाता है। रिवाज ही का दूसरा नाम सनातन है हमें रिवाज से कोई द्रोह नहीं है जो इस का योग उपयोगिता के साथ निबहा जाय। जहां २ और जिस में रिवाज का उपयोग प्रत्यक्ष है वहां वह किसी तरह त्यागने के योग्य नहीं वरन् सर्वथा ग्राह्य है। कनौजियों में रिवाज है घी का पका हुआ अन्न जिस समय पकाया जाय या जिस समय उसे भोजन करने लगैं पवित्रता से पकावैं और भोजन करैं-बीच में उस के ले जाने या उठाने धरने में शूद्र का स्पर्श हो जाय तो उसे किसी तरह दूषित नहीं मानते। अच्छा है एक तरह पर झूठी आचार की छिलावट से बहुत कुछ गला छुटा रहा। ऐसा ही महाराष्ट्रों में चलन है जल पात्र हाथ में लिये हों तो कच्चा अन्न दाल भात एक स्थान से दूसरे स्थान पर कोसों ले जाने पर भी अनाचार नहीं है पर पंक्ति में भोजन करते समय एक का दूसरे से स्पर्श हो जाय तो भोजन करने वाले उठ खड़े होंगे। पंचद्रविड़ मात्र का सह भोजन है पर स्पर्श एक दूसरे का न हुआ तो सह भोजन में कौन सी बाधा पड़ी यह काम महाराष्ट्रों का अवश्यमेव सराहना के

योग्य है-मथुरिया चौबों में जूठे मुंह किसी खाद्य वस्तु को छू लें तो वह भी जूठी समझी जायगी पर किसी तकरीब बिवाह आदि में कुल बिरादरी भर एक ही ग्लास में पानी पी लें कभी उसे उच्छिष्ट न मानगे। उन के समग्र मण्डल के ऐक्य साधन का बड़ा उपयोग इस में पाया जाता है। जल के शत्रु गुजरातियों में माघ पूस की आधी रात को भी बिना घड़ों पानी से नहाए मुंह में ग्रास न देंग न जानिये इस रिवाज का क्या उपयोग समझा गया है? गायत्री अपने को कौन कहै शायद आती भी न हो पर नहायंगे दिन में छ बार अवश्य॥

सर्वस्व बिगड़ रहा है; हम लोग रद्दी हो गये घूर में मिले जाते हैं पर ८ या ९ वर्ष के भीतर कन्या ब्याह देने की रिवाज जो निकल पड़ी उसे हम नही छोड़ते। मुसलमान बादशाहों के अत्याचार के समय अलबत्ता इस की उपयोगिता रही होगी पर वह अब रिवाज हो गया। केवल रिवाज हो यह कुरीति रह गई हो सो नहीं वरन् इस ने यहां तक टांग पसारा कि स्वर्ग को सीधा सिधारना या नरक में जा गिरना इसका परिणाम हो गया। अब सोशल कानफ्रेंस वाले बिधवा बिवाह की भी रिवाज निकाला चाहते हैं यह नहीं सोचते कि बाल्य बिवाह का बुरा रिवाज जारी ही है जिस से समाज रसातल में पहुंचती जाती है तब इस दूसरी बुराई का बीज हम क्यों बो रहे हैं? कुलवती अक्षतयोनि वाली बिधवायें बैठी रह जांयगी; जारिणी जिन के आंख का पानी ढुरक गया है, नये २ पति को बराबर करती और छोड़ती रहेंगी। कुलवती बाल बिधवाओं को भ्रूण हत्या का पाप आरोपण किया जाता है और पुरुषों में कोई दोष नहीं लगाया जाता-निश्चय मानिये स्त्रियों में इतना ज़ब्त रहता है कि वे अपना सतीत्व निबाह लेंयदि उन्हें कोई दुष्ट पुरुष उन का सतीत्व भंग करने वाला न बहकावे। मसल है "न सूत न कपास कोरियों से लठिं लठा" बिधवा बिवाह पर बड़ी २ वक्तृतायें होती हैं लम्बे चौड़े लेख लिखे जाते हैं किन्तु जिन बाल

बिधवाओं को व्याहना है उन की राय कभी किसी ने ली है। बिधवा बिवाह का रिवाज न होने से मैं समझता हूं वे मर जायंगी और इसे कभी मंजूर न करगी समाज में अपनी हेठी होना सौ बार मर जाने के बराबर है दूसरे बाल्य बिवाह की कुरीति से देश में जन संख्या बढ़ती जाती है बिधवायें भी जो व्याही जाने लगैंगी तो जन संख्या और भी बढ़ैगी—और अभीष्ट देश के लिये यही है कि जन संख्या कम हो। प्रति चौथे पांचवें वर्ष अकाल की कृपा से और भूमि कर उगाहने में अंगरेज़ी शासन की कड़ाई भूमि से इतनी उपज नहीं होने देती कि प्रति दिन बढ़ती हुई जन संख्या को पाल पोख सकै बंगाली बिधवाओं में एकादशी को निराहार रहने का रिवाज है जल पीने की यहां तक कड़ाई है कि कदाचित् कोई बिधवा एकादशी के दिन मरती हो तो मुंह में गंगाजल देने के एवज़ कान में जल छोड़ते हैं—महाराष्ट्रों में बिधवा बालिका भी हो तो उसका सिर मुड़ा देते हैं। खत्रियों में महीनों और बरसों तक घर में कोई मौत हो जाने पर लंघन अर्थात् दिन भर फाका और सियापा रखने का रिवाज है। प्रत्यक्ष में इस तरह की निर्दय रिवाजों का क्या उपयोग है कुछ मन में नहीं आता पर किस्की ताकत जो उन्हें रोक सके—रिवाज समाज ग्रथन का एक अंग सा हो गया है इस की गुलामी केवल हिन्दुस्तान ही में हो सो नहीं यूरोप के देशों में भी समाज रिवाज की गुलामी से बरी नहीं है—जैसा एक पुरुष के दो स्त्री नहीं हो सक्ती-बंगाल में कुलीन लोगों के १८ व्याह तक हुये हैं—विलाइत में एक साहब दो मेम नहीं कर सक्ते उस की उपयोगिता प्रत्यक्ष है हज़ारों तनखाह पाने पर भी एक का बोझ नहीं सम्हाले सम्हलता कर्ज़दार रहते हैं तब दो का बोझ कैसे उठा सकते हैं—स्त्री के मर जाने पर दूसरा व्याह उस की बहन के साथ करने का रिवाज अंगरेज़ों में नहीं है जो कर लें तो समाज में मुंह दिखलाने लायक नहीं रहते इस से क्या उपयोग है कुछ समझ में नहीं आता—मातुल कन्या परिणय

और पलांडु भक्षण दोनो शास्त्र निषिद्ध हैं पर दाक्षिणात्यों में इस का रिवाज होने से समाज में दूषित नहीं; कुलीन घराने वाले भी माता की लड़की व्याह लेते हैं और वेद की समग्र संहिता कण्ठाग्र किये हैं पर प्याज खाने से नहीं हिचकते-ऐसा ही मुसल्मानों में सिर्फ दूध का बरकाव रखते हैं सगे चचा की लड़की व्याह लेना शरा के अनुकूल है-इत्यादि चलन या रिवाज के सैकड़ों उदाहरण मिलते हैं जिन में कहीं २ तो उस चलन का उपयोग बिल्कुल साफ और प्रत्यक्ष है कहीं उस का उपयोग समाज में ढूंढने से भी नहीं मिलता बल्कि उपयोग के बदले समाज को उस्से बड़ी हानि पहुंच रही है ॥

भारत का त्रिकाल।

हमारे यहां पहले के ऋषि मुनि को भूत भविष्य वर्तमान् तीनों काल का ज्ञान था और वे त्रिकालज्ञ कहलाते थे बल्कि भविष्य का ज्ञान उन के तपोबल या ऋषित्व का एक अंग था। अद्भुत प्रतिभा वाले इतिहासवेत्ता प्राकृतिक नियमों के हेर फेर और अदल बदल से महीनों और वर्षों पहले किसी नई घटना को बता देते हैं और जैसा वे पहले से बता देते हैं या लिख देते हैं प्रत्यक्षर तदनुकूल होता है बाराह मिहर ने अपनी संहिता में लिखा है कि जो हमारे लिखने के अनुसार प्रति दिन भचक्र मिलाता रहे तो भविष्य के कथन में उस की वाणी कभी मिथ्या न हो-वर्षा के विचार में नारद ऋषि कृत मयूर चित्रक एक ग्रन्थ है बरसात का भविष्य ज्ञान उस के द्वारा भरपूर हो जाता है-अस्तु अब भारत के सम्बन्ध में भूत वर्तमान् और भविष्य कैसा था है और होगा यह इस समय उद्देश्य या उपादेय विषय है। तहां भूत भारत का कैसा था यह किसी से छिपा नहीं है धरती सोने फूल फूली थी सब ओर अमन चैन था घर २ आनन्द बधाई बज रही थी किसी को किसी बात की कमी न थी-वर्तमान् जैसा दुर्गति का है सो भी किसी से छिपा नहीं

है आध्यात्मिक आधि दैविक आधि भौतिक त्रिविध तापतापित प्रजा शासन की कड़ाई से पेट की अग्नि से झौंस रही है-जहां मणिमुक्ता प्रवाल का कंकर पत्थर के समान ढेर था वहां अब कारखानों में चिमनियों के सुलगाने को जहां तहां पत्थर के कोइलों का ढेर पाया जाता है-कदाचित् वेही हीरे समय के प्रभाव से बदल कर अब कोइले हो गये हैं "किमिस्ट" रसायन विद्या जानने वाले कहते भी हैं कि कोइला और हीरा दोनों में एक ही रसायनिक पदार्थ है-पहले छोटे २ गाओं में भी लक्ष्मी का प्रकाश था सब लोग प्रफुल्लित अपनी गाढ़ी मिहनत की कौड़ी गांठ बांध सन्तुष्ट घूमते फिरते थे एक कमाता था दस खाते थे समस्त देश लक्ष्मी का विलास स्थान था-अब मुल्क का मुल्क उजाड़ हो कलकत्ता और बंबई बसा है लक्ष्मी का प्रकाश केवल इन्हीं दो स्थानों में पाया जाता है-देश भर श्मसान सा सूना पड़ा है असन्तोष यहां तक छाया है कि एक घर में दस हैं तो दसौ गाढ़ी मेहनत से कमांय तब पेट पाल सक्ते हैं पहले घर २ ब्राह्मणों के वेद पाठ की कलरव ध्वनि स्थान २ में गूंजा करती थी-अब मियां लोगों के बांग देने का कठोर शब्द और गिरजाघर के घण्टाओं का घोर नाद कानों की चैलियां झारता है-उस समय सौत्रामणय आदि यज्ञों में सोमपान की चाल थी अब ह्विस्की और शांपेन की भरमार है कोई साल नहीं जाता जिस में बड़े २ शहरों में शराब की दो चार नई दूकान न खुलती हों-ईश्वर का निराकरण करने वाला नास्तिक भाव प्रजा में न फैले इस की चैकसी के लिये उस समय मनु ने अपने धर्मशास्त्र में नास्तिक को बध दण्ड का नियम रक्खा था अब ख्याल का आज़ाद और नेचरिया न हुआ तो उस के पूर्ण शिक्षित होने में कसर समझी जाती है—कोई समय पहले हम दुनियां भर को अपने यहां की कारीगरी से रोज़मर्रे के काम की चीज़ें कपड़े आदि मुहैया करते थे अब यहां तक अपाहिज आलसी और निकम्मे हो गये कि हाथ भर तागा और एक सूई के लिये तरसते हैं

विदेशियों का मुह ताक रहे हैं। ढाका का मलमल कश्मीर का शाल लखनऊ का चिकन बनारस की कारचोबी उजहि गई। दूर २ के राजा और बादशाह यहां के सम्राज चक्रवर्ती नरेशों की चरण धूलि को अपने लिये मान और प्रतिष्ठा का द्वार समझते थे अब दो अक्षर की कोई उपाधि पाने को या तोपों की सलामी बढ़ जाने को राजा लोग लाखों चन्दा दे डालते हैं और उच्च पदाधिरूढ़ कर्मचारियों की खुशामद करते हैं। भूत पूर्व यहां के योगी और संयमी अपनी दमन शक्ति और उपदेश से पृथ्वी भर के लोगों को अचंभित किये थे। यहीं बुद्ध देव हुए जिन्हों ने आधे से अधिक एशिया खण्ड को बौद्ध मतावलम्बी कर डाला। मोक्ष मार्ग बतलाने में उपनिषद् और गीता से बढ़ कर आज तक किसी देश के दार्शनिक और बुद्धिमान् ने कोई ऐसा ग्रन्थ नहीं रचा। जहां के आचरण की नकल सब लोग करते थे और आचार बिचार रहन सहन के क्रम को भू भाग के सब लोग सीखें ऐसा मनु ने अपनी स्मृति में लिख दिया है यथा—

अस्मिन्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवाः॥

कहते शरम और हंसी आती है अब उन्हें पादरी साहब मुक्ति का रास्ता दिखलाने और "मोरालिटी" सिखलाने आए हैं। गंवारू कहावत है "सत्तर दांव बसन्ता जानै तेहका सिखावैं ननकू"। उस समय ब्राह्मण तीनों बर्ण के लोगों को अपने मूठी में किये थे, किसी की सामर्थि न थी कि इन से आंख मिला सके। अब इस समय बनिया बक्काल भी ब्राह्मण बना चाहते हैं, और काछी कुनबी क्षत्री। सच है "धोबी के घर धरम दास हैं बाह्मन पूत मदारी" हम आर्य हैं, धन्य हमें जो भारत की पुण्य भूमि में जन्मे हैं, ऐसा कहते हम अपना भाग्य सराहते थे वही अब हमें शरम आती है जब विदेशी हम से घिनाते हुये

हमे नेटिब कहते हैं। शुशिक्षित हो यही जी चाहता है कैसे हिन्दू समाज से निकल भागैं और विलाइत की रास्ता पकड़ैं। डासन के घर के बने बूट के मुकाबिले दिल्ली की बनी जूतियां पांव में भट्टी मालूम पड़ती हैं लुधियाना और मुरादाबाद के बने मोटे कपड़े हमारे नव युवकों के कोमल अंगों में गड़ते हैं। अस्तु गाई गीत को अब कहां तक गावैं इस में सन्देह नहीं भारत का भूत काल बड़ा चमकीला था पर यह सब तो वही बात हुई कि हमारे बाप ने घी खाया था न बिश्वास हो तो हमारा हाथ सूंघ लो। अवनति के इस धुंधले ज़माने में पड़े २ टटोलते हुये आप के इस बढ़ावा देने से अब कुछ काम चलेगा? "बीती ताहि बिसार दे आगे की सुधि ले" आगे के लिये अब क्या होनहार है सो ईश्वर जाने पर यह अवश्य कहा जा सक्ता है कि सदा सब के दिन एक से नहीं रहे जो उठा है वह गिरेगा और जो गिरा है वह कभी न कभी उठैगा भी। यह किसी तरह असंभव नहीं है कि भारत अपना पहिले का महत्व और गौरव अब न प्राप्त कर सके। और उस महत्व को फिर पा जाना किसी तरह दुष्कर नहीं यदि हम में Perseverance दृढ़ अध्यवसाय या दृढ़ संकल्प, आत्म गौरव Self respect, आत्म निर्भर Self helf; आत्म त्याग Self Sacrifice और स्वत्व की पहचान स्थान पावे। अच्छा कहा है—

उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूतिकर्मसु।
भविष्यतीत्येवमनः कृत्वा सततमव्यथैः॥

हमारा काम अवश्य होगा ऐसा मन में ठान उठना चाहिये, जागते रहना चाहिये, जो काम सम्पत्ति का बढ़ाने वाला हो उस में जुट जाना चाहिये। और वेही अपना काम भरपूर करने लायक होते हैं जो मुह से बहुत बड़बड़ाते नहीं॥

दहत्यग्निरवाक्यस्तु तूष्णीं भाति दिवाकरः ।
तूष्णीं धारयते लोकान् वसुधा सचराचरान् ॥

आग चुप चाप जला देती है; सूर्य चुप चाप प्रकाश पहुंचाता है; धरती चुप चाप चराचर स्थावर जंगम समस्त संसार का बोझ अपने ऊपर लिये है। सच है जो गरजी सो बरसी क्या ॥

गर्जति शरदि नवर्षति वर्षति वर्षासु निःस्वनो मेघः ।
नीचो वदति नकुरुते नवदति सुजनः करोत्यवश्यम् ॥

शरत् काल के मेघ बरसते नहीं गरजते बहुत हैं, बरसात के मेघ बरसते हैं पर गरजते नहीं। नीच लोग कहते बहुत हैं पर करते नहीं पर सुजन करते हैं कहते नहीं। विपत्ति में पड़ा अपने पुत्र से कोई कहता है—

बहुकृत्ये निरुद्योगः जागृतव्ये प्रसुप्तकः ।
निर्भयस्त्वं भयस्थाने हा पुत्रक विहन्यसे ॥

जब तुम्हें बहुत काम करना है तब तुम निरुद्योग बैठे हो; जागना चाहिये तब तुम सो रहे हो जहां भय है वहां तुम निडर बैठे हो पुत्र तुम व्यर्थ मारे जाते हो। हम हिन्दुस्तानियों के लिये यह ऊपर का पछतावा बहुत ठीक है। इस अंगरेज़ी राज्य के स्वास्थ्य और सुप्रबन्ध में जब सब तरह का सुबीता है और ज़ाहिरा में सब द्वार हमारे लिये खुले हैं तब हम निरुद्योग हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं, हमारे चारो ओर जितने देश और जितनी कौमें सब उद्योग में लगी जागती हुई अपना २ काम कर रही हैं पर हम घोर निद्रा में सो रहे हैं। गूढ़ पालिसी से हमे सशंकित रहना था सो हम निःशंक हैं। अभी बहुत ही थोड़े लोग हैं जो इस राजकीय पालिसी के मर्म तक पहुंचे हों तब हमारी दीन दशा क्यों न हो। इस दीनता से उद्धार पाने को हमे सर्वथा

निराश न होना चाहिये केवल इतना ही कि हम पुरुषार्थ विहीन हो गये हैं, हमारे पौरुषेय गुणों में मुरचा लग गया है, उसे साफ कर डालें, तब अचरज क्या कि हमारा भविष्य गौरव और महत्व भूत पूर्व महत्व से भी अधिक चमकीला हो जाय। स्वदेश पर अनुराग भास्कर के प्रकाश का अरुणोदय अब हो चला है ईश्वर सानुकूल रहा तो देश से "अभूतिमसमृद्धिंसर्वानिर्णुद मे गृहात" जो गुलामी का कष्ट झेल रहे हैं वे प्रभु बन बैठेंगे जिसे हम लम्बे चौड़े व्याख्यानों में केवल मुह से कहते हैं उसे करके दिखा देंगे। प्रत्येक नगरों में स्वदेशी आन्दोलन मच रहा है स्वदेशी वस्तुओं के कारखाने खुलते जाते हैं जापान आदि देशों में नव युवक कला कौशल सीखने को जा रहे हैं। भविष्य के लिये यह सब बहुत अच्छा है किन्तु हमारे में Nationality जातीयता या मुल्की जोश आने में फिर भी अभी बड़ी कसर है। देश में लोग नौकरी के लिये लालयित हो रहे हैं इस का एक कारण यह भी मालूम होता है कि यहां काम न रहने से न पास भरपूर पूंजी रहने से पढ़ लिख लोग और करैं क्या सिवा इसके कि बंगले २ नौकरी तालाश करते डोलते फिरैं। पहले के लोगों ने सेवा वृत्ति को अधम ठहराया था और व्यापार को उत्तम पर इस समय व्यापार में बहुधा टूटा पड़ जाने की भय से नौकरी को लोग अधिक चाहते हैं। सब के ऊपर एक बात यह बड़ी त्रुटि की हमारे में है कि राजकीय प्रसाद को हम बहुत अधिक चाहते हैं। छोटे लोगों का तो कुछ कहना ही नहीं बड़े २ लोग गवर्नमेंट की दी हुई दो अक्षर की कोई पदवी के लिये लाखों खरचने को उद्यत रहते हैं। राजा लोग रेज़ीडेन्टों की खुशामद में साहब का मुह जोहा करते हैं पर बहुधा कृत कार्य नहीं होते। कौमीयत तथा मुल्की जोश का हमारे में कहां तक अभाव है यह इस से बहुतही स्पष्ट है। व्यापार में घाटा की संभावना यह हमारी भूल है बुद्धि परिश्रम और ईमानदारी से रोज़गार करनेवाले को कभी घाटा नहीं होता

व्यापार की कुंजी केवल ईमानदारी Honesty है जिस का अभाव हम अपने में बहुत अधिक पाते हैं। नही तो विलाइत की अपेक्षा हमें सब बातों का सुबीता है मज़दूरी यहां सस्ती है चीजें कच्चा बाना यहीं की पैदावार है केवल आपस की हमदरदी और सब के ऊपर ईमानदारी की ज़रूरत है। यह सब एक दिन यहां होगा और उसी को देदीप्यमान् भारत का भविष्य कहेंगे ॥

——

बलीवर्द।

बलीवर्द तुम धन्य हिन्द के तुम्ही सपूत कहाये।
तुम से हारे सबै रहे जे वाहक भारी भरके ॥
तुम्हरो अटल लगाव भूमि से कर्षक तुम्हे लगाये।
जोतैं भूमि हर्ष निर्भर ह्वै मुठिया हल की धर के ॥

गर्दभ।

गर्दभ तुम्हरी सहन शीलता किमि कोउ करै बखान।
रजक केर तुम संपत सगरी है यह बात पुरान ॥
लाद पीठ पै लादी वाकी पहुंचायो तेहि घाट।
तहू कृतघ्न रहै धोबी वह यहै जगत को ठाठ ॥

श्वान।

धन्य श्वान है भाग तुम्हारे घूमहु चढ़ चढ़ गाड़ी।
तनिकहु सो जो रोग होय तुम देखहिं डाकृर नाड़ी ॥
आदर तुम्हरो देख २ सब लोग रहे भौचक्के।
सिखी खुशामद तुम से बहु जन ह्वै साहब के कुत्ते ॥

उष्ट्र ।

तुम्हरी दशा उष्ट्र जी ऐसी जैसे भारत बासी ।
लादौ फांदौ गठरी ढोवहु तबहू सदा उदासी ॥
कबहुं मगन तुमहि नहि देखा काम करहु चहे कितनो ।
कारण यही नकेल तुम्हारी रही अन्य के कर मो ॥

आदमी ।

ये लीला है अद्भुत तेरी हे आदम के पूत ।
बडी घमण्डी बातें करता तू शैतां का दूत ॥
पूरब पश्चिम कहीं क होवे आदत मे तू बन्दर है ।
पशुओं के सब ऐगुन तुझ मे तू भी अजब मुछन्दर है ।

सुशीला सौदामिनी अथवा स्नेह विजय ।

(शिक्षाप्रद एक सामाजिक वार्ता)

खंडवावास्तव्य—चम्पा लाल उपनाम सुधाकर कवि लिखित

दारिद्र और अपमान ।

हे दयाधाम परमात्मन् ! इस दुःखिता अबला को अभी और दुःख पहुंचाने की क्या तेरी इच्छा है ? समाज से जो मुझ पर लोगों का सद्भाव था बिदा हो गया, मित्र शत्रु हो गये, धन भी पास न रहा, अब मैं भिक्षुकी सी भिक्षा मांग अपना जीवन अपकीर्ति के साथ बिता रही हूं । कितना निंद्य मेरा जीवन और कैसी अधम यह मेरी वर्तमान दशा है मैं क्या थी क्या हो गई, हाय यह विचार मुझे पागल किये हुये है । इस तरह एक बूढ़ी स्त्री एक झोपड़ी में बैठी हुई आपही आप बड़बड़ा रही थी । कुछ देर बाद "सौदा अरी सौदामिनी यहां तो आ" कह वह चिल्ला उठी ।

तत्काल षोड़श वर्षीया रूपवती नव यौवना बाला उसके सामने आ खड़ी हो गई। सर्वांग सुन्दर कोमलाङ्गी इस बाला की रूप माधुरी इस कारण और भी अधिक देदीप्यमान थी कि यह इस के वयः सन्धि का समय था। इस के एक २ अङ्ग सुडौल और हृष्ट पुष्ट थे विधाता ने इसके एक २ शरीरावयव में सौंदर्य और तरुनाई की लवनाई कूट २ के भर दी थी। इसकी रूप माधुरी का विशेष बर्णन न कर केवल इतना ही कहना बहुत है कि बिधाता ने इस के निर्माण में उपमेय बस्तुओं में किसी को शेष न रक्खा यह मानो परमेश्वर की अलौकिक लेखनी का लिखा हुआ एक चित्र थी। इसकी सुन्दरता के बर्णन में लेखक की कल्पना शक्ति छोर को पहुंच अन्त को बिवश मौन धारण कर लेती है सो इसी एक बात से स्पष्ट है कि केवल मुखारविन्द की रचना में बिधाता को किन २ बस्तुओं की आवश्यकता पड़ी थी जैसा इस कवित्त से स्पष्ट है॥

कोमलता कंज तें सुगन्ध ले गुलाबन तें चन्द्र तें प्रकाश लीन्हो उदित उजेरो है। रूप रति आनन तें चातुरी सुजानन तें नीर लै निपानन तें कौतुक निबेरो है। ठाकुर कहत यों मसालो विधि कारीगर रचना निहारि को न होत चित चोरो है। कंचन को रंग ले सवाद ले सुधा को बसुधा को सुख लूटि कै बनायो मुख तेरो है॥

केवल मुख के बनाने में ब्रह्मा ने इतनी बस्तुओं की योजना की है। तब हमारे विज्ञ पाठक तथा पाठिकायें अनुमान कर लें कि कामिनी के इतर अंग बनाने में विधि ने अपनी कितनी कारीगरी खरच की होगी। अस्तु सौदामिनी ने आते ही माता से बिनय पूर्बक पूछा, "क्या मां! मुझे किस लिये बुलाया? क्या मुझ से कुछ अपराध हो गया है?"

मा-अपराध क्यों होगा। पुत्री! तू आज खाय गी क्या? घर में तो अन्न का एक कण भी नहीं है!

सौदामिनी क्या चिन्ता यदि तेरे पास पैसे न हों तो मैं धनंजय से थोड़ा धान ले आऊं। जब तक वो जीता है तब तक अपने को किस बात की फिकर है।

माता को इस से सन्तोष नहीं हुआ, बोली, "मूढ़ छोकरी' रोज़ तुझे उधार वस्तु देकर धनंजय पैसे किन के पास से लेगा? वह भी बेचारा गरीब ठहरा, आज तक वह अपने को पचास रुपये का माल तो दे चुका है" ॥

सौदामिनी–ऐसा भी हो तो क्या? क्या धनंजय न देगा तो अपन भूखे मर जायगे? जिन का धनंजप ऐसा सहाय कर्त्ता नहीं होता वे सब क्या मर थोड़े जाते हैं। परमात्मा अपना पालक है उसी ने अपने को जीवन दिया है, तो धनंजय अथवा दूसरे, किसी के द्वारा वो अपने जीवन के साधनों को पूरा करही देगा! इस की क्या चिन्ता। ओः! अपने को तो अपनी ही फिकर है, किन्तु उसे जो सब संसार की फिकर है॥

मा–"पुत्री! तू ये कैसी मूर्खता भरी बातें कर रही है? परमेश्वर ने अपने को हाथ, पैर, आंख, मुख तथा इन से भी अधिक उपयोगी बुद्धि और सारासार का विवेक पृभृति साधन, प्रदान किये हैं। इस से यदि अपने को जीना हो तो अपना निर्वाह स्वयं अपने ही से करना चाहिये। यदि सो नहीं हो सके तो मृत्यु तो बनी बनाई है ही। परमेश्वर क्या लाके अपने घर में थोरे डाल जायगा? उसने मनुष्यों को साधन प्रदान कर दिया है जिस का प्रयोग करना उनके आधीन है"॥

सौदामिनी–"मृत्यु? मृत्यु तो अमिट है अमीर और ग़रीब सभी के सिर पर चढ़ी नाचा करती है। किसी से भी टल नहीं

सकोती । तब मृत्यु से क्या डर । मुझे मृत्यु से किसी प्रकार का खेद नहीं होता" ॥

मा-हां ठीक है तुझे अपने मानापमान तथा किसी की चिन्ता तो है ही नहीं ॥

सौदामिनी कुछ काल तक चुप रह बोली "कदाचित् अब धनंजय उधार न दे तो जीवन का निर्वाह किस प्रकार होगा? किन्तु नहीं दीन दयाल भगवान् ऐसा क्रूर नहीं होगा। अपने निराधार बालकों को भूखे मरते वो नहीं देख सकेगा!"

मा-"भूख से मर जाना क्या तुझे असंभवित लगता है? क्षुधा की पीड़ा से सहस्त्रों मनुष्यों को मरते मैंने अपनी आखों से देखा है। अपने भाग्य में भी इसी प्रकार मृत्यु बदी हो तो क्या आश्चर्य! बेटी! यदि तू न होती तो मुझे खाने पीने की कुछ भी परवाह नहीं होती। बिना खाये केवल पानी पी कर ही मैं बहुत दिन तक अपना जीवन टिका सकती हूं। निर्वाह के लिये नौकरी भी कर सकती हूं। परन्तु तू ही मेरे निर्भय मार्ग में भय उत्पन्न करने हारी है तू वह गांठ है, कि जिस ने मुझे इस संसार स्तम्भ से जकड़ कर बांध रक्खा है ॥

"ये सब उद्गार तथा बीती बात का स्मरण निरुपयोगी है" सौदामिनी ने ज़रा स्तब्ध रह कर कहा "परन्तु मां! अपन ऐसा न कर पटना चल दें तो क्या हो?"

"पटना" इस शब्द उस वृद्धा स्त्री के हृदय में सोते हुये क्रोध रूपी विकराल सिंह को जगा दिया। वो अत्यन्त शोकाकुल हो गई नेत्रों से आसुओं की धारा उसके शुष्क कपोल पर बहने लगी ॥

इतर अनेक दुःखों को वो सहन कर सकती है, किन्तु इस "पटना" का नाम मात्र उस से नहीं सहा जाता सो इसलिये कि पटना में एक धनाढ्य गृहस्थ के पुत्र के साथ सौदामिनी का संबन्ध हुआ है। वह धनाढ्य महा अभिमानी है। अभिमान से सौदामिनी के माता पिता के दारिद्र होने के कारण उस ने इस से अपना सब प्रकार का सम्बन्ध तोड़ डाला था। हाय! दारिद्र भी इस अवनि पर एक प्रकार का पाप ही है, जिस के कारण धनवान् लोग दारिद्र पीड़ितों को स्पर्श करने से भी हिचकिचाते हैं। इसलिये यदि सौदामिनी के पिता के परलोक होने पर दरिद्रता के कारण अपनी निर्धन पुत्र बधू को अपने सब सांसारिक वैभव के भंडार रूप राज महल समान सुन्दर सदन में उस के श्वसुर ने प्रवेश करने को मना कर दिया हो तो क्या आश्चर्य! अब सौदामिनी एक धनाढ्य पिता की पुत्री न रही, किन्तु दीन, दरिद्र तथा दुखी भिक्षुकी की सुता है। इस भयंकर घटना को आज पांच वर्ष बीत गये हैं। इस दुखद दीर्घ काल में निाधार मां बेटी दरिद्रता के अथाह समुद्र में डूबती जाती थीं। यहां लो कि आज हम उन्हें अब बिना भूखे मरते देख रहे हैं। शोक!

सौदामिनी की माता कुछ न कह थोड़े समय तक आप ही आप रोती रही। उपरान्त अपने मन में कुछ विचार कर उस ने पुत्री से पूछा, "क्या बिना बुलाये ही तू पटना जाना उचित समझती है? और अगले साल तो तेरे पति ने दूसरा बिवाह भी कर लिया है. यह सुन कर भी तू वहां रहना योग्य समझती है"?

मुग्धा सौदामिनी ने जल पूर्ण नेत्र तथा गद्गद् हृदय से मनो विकार की प्रबलता रोक कहा "अयोग्य क्यों मां मेरे लिये वही स्वर्गीय स्थान है, मुझे वहां रहना ही उचित है। मैं वहां एक दासी के समान रहूं तो उस में भी मेरी काया का कल्याण है। स्त्री का

पति ही परमेश्वर है, और उस की एक निष्ठा सेवा करना ही आर्य पत्नी का मुख्य कर्त्तव्य है। पति के समक्ष स्त्री को भय, अपमान तथा शोक नहीं टिक सकता। नीच लोग चाहे जो बका करें, परन्तु पति की पूजा ही में स्त्री को स्वर्ग का सुख है! कदाचित् मेरे पति मुझे मान सहित न बुलावें, तथा शय्या सुख की भागिनी नहीं बनावें और सुख दुःख में भी भाग लेने से पृथक रक्खें, किन्तु अपने चरणों की शरण में तो स्थान अवश्य देहीं गे अस्तु वही मेरा स्वर्ग और वही मेरा सर्वस्व है" ॥

अपनी शुद्ध चरित्रा पुत्री के ये पवित्र तथा उच्च विचार सुन वृद्ध माता का हृदय आनन्द से परिपूर्ण होने लगा। पुत्री के कथन का प्रभाव उस के हृदय पर इस प्रकार पड़ा कि जिस की आशा सौदामिनी को स्वप्न में भी नहीं थी। आनन्द से उन्मत्त हो माता ने सप्रेम पुत्री को दृढ़ालिंगन कर बार बार उस के कपोलों का चुम्बन करने लगी। थोड़ी देर चुप रह बोली यदि तेरी यही इच्छा है तो मैं इस के विरुद्ध नहीं हूं। पति पत्नी के कर्त्तव्य पवित्र ही होना चाहिये इस लिये कि संसार एवं स्वर्ग में पति ही स्त्री का परमेश्वर माना जाता है। पुत्री! आज ही अपन पटना को रवाना हो जांय और वहां जा कर देखें कि तेरे समान धर्म पत्नी को तेरा गर्विष्ट स्वामी कितने और कैसे आदर सत्कार से बुलाता है ॥

मां बेटी दोनो ने इस तरह बात चीत कर पटना जाने की तैयारी कर दीं। ऊपर के कहे अनुसार उस के घर में अन्न तो था ही नहीं कि कुछ खा पी लें। इसलिये खाये पिये बिना ही अपनी झोपड़ी को सूनी कर पटना को दोनो रवाना हुईं ॥

वहां से पटना अनुमान पांच मील के दूरी पर था और मार्ग बहुत लम्बा न होने से लग भग तीन घंटे में हीं दोनों मां बेटी पटना

पहुंच गईं। इतनी रास्ता चलने का कभी प्रसंग भी पड़ने से तथा धूप में पैदल चल कर अभीष्ट स्थान तक पहुंचने में बहुत बिटम्बना सहनी पड़ी। निदान अन्त में उन का सुफल मनोरथ हुआ! तृषा से सुष्क कण्ठ घबराई हुई और शंका से भरी हुई वो मां बेटी ज्यों त्यों निर्दिष्ट स्थान के लग भग जा पहुंचीं। उन्हों ने पटना के दर्शन किये। वहां पहुंचने में उन्हें जितनी बिटम्बना सहन करनी पड़ी, उस से भी अधिक बिटम्बना साधारण भिक्षुक के भष में वैभव युक्त विलास भवन में प्रवेश करने के समय भासने लगी। एक दिन जिस ने अद्वितीय सुख, आनन्द तथा वैभव का उपभोग लिया था। आज समय के फेर से वही सौदामिनी की माता अपने सम्बन्धी के द्वार में भिक्षुकी के समान खड़ी थी। हा! दैव की गति भी विचित्र है। सच है "दिनन के फेर से सुमेरु होता माटी को" ॥

सौदामिनी के हृदय में इस समय क्या२ भाव उत्पन्न होते होंगे। अब इस का हमे अनुभव करना चाहिये। उस का हृदय किसी दूसरे ही मनो विकार के कारण धड़कने लगा। उस की यही मनो भावना थी, कि "जिस पति की प्रेम प्रतिमा अपने पवित्रअन्तःकरण में धारण कर वह प्रेम पूर्वक पूजा करती थी, जिस देवता के पांच बर्ष से दर्शन दुर्लभ हो रहे थे। उसी मन मोहन मूर्ति का आज दीर्घ काल पश्चात् साक्षात् दर्शन लाभ प्राप्त कर आराधना पूर्वक यह भिक्षा मांगूगी कि, हे देवाधिदेव इस दासी को पत्नी के समान नहीं तो दासी के समान भी तो चारु चरण कमलों की सेवकाई का स्थान प्रदान करिये। परन्तु यह प्रार्थना सुफल होगी या नहीं? एक दासी के समान भी पति मुझे अंगीकार करेंगे या नहीं"? ऐसी नाना प्रकार की शंकायें तथा बिबिधि तरंगे उस के मन में बारम्बार उद्भवित हो कर लय होने लगीं। वे मनस्तरंगें, जिस प्रकार तूफान शान्त समुद्र में क्षोभ उत्पन्न कर देता है। ठीक उसी प्रकार सौदामिनी के शान्त हृदय

में अशान्ति आभास करने लगी। स्त्रियों की स्वाभाविक लज्जा ने भी आकर इस समय उसे क्षुभित किया। "पति के समक्ष कैसे जाऊं?" यह वर्षों से जिस कार्य के लिये वो हृदय से उत्सुक तथा आतुर हो रही थी उस कार्य्य में प्रवृत्त होना अब उसे अत्यन्त दुर्गम्य भासने लगा। सुशीला स्त्रियों का स्वभाव ऐसा ही होता है॥

अन्त में सुख की आशा का विजय हुआ और मां बेटी जामातृ के हर्म्य (हवेली) के निकट आ पहुंची। द्वार के द्वारपालों ने प्रथम तो उन्हें भीतर जाने को मना किया। परन्तु ज्यों ही उन्होंने सौदामिनी को पहिचाना त्यों ही भीतर जाने के लिये सादर प्रार्थना की। भीतर भी छत पर चढ़ते समय एक परदेशी भैया ने उन्हें टोका, उसे भी सौदामिनी अपना परिचय दे ऊपर चढ़ी।

छत के पहिले खण्ड में घर का कारोबार चलानेहारी मुख्य वृद्धा स्वामिनी का निवास स्थान था। मां बेटी के आते ही तथा नज़र पड़तेही वहां पर छम २ बिना कारण इतस्ततः फिरती हुई कितनी नव यौवना युवतियां आश्चर्य से दिग्मूढ़ हो गईं। स्थूल, कुरूपा तथा मोटे २ हाथ पग और गरुड़ के समान नासिका वाली ज़र जवाहिरात से लदी हुई महल की वृद्ध पुरन्ध्रियां वहां दासियों तथा इतर स्त्रियों के साथ बैठी हुई विनोद कर रही थीं। उस ने इन नवागन्तुक युगल अबलाओं के आतेही इन की ओर धिक्कारयुत बक्र दृष्टि से देखा॥ पाठक! यही सौदामिनी की सास है॥

(क्रमशः)

रूस जापान युद्ध।

रूस और जापान में क्यों युद्ध हुआ; युद्ध छिड़ जाने का क्या कारण था; कैसे दृढ़ संकल्प युद्ध के लिये जापान वाले अन्त तक

बने रहे ; जिस का परिणाम केवल विजय लाभ करना ही न हुआ वरन समस्त संसार को जपानी इस समय देशानुराग की शिक्षा देने और उदाहरण होने को अग्रगण्य हो रहे हैं यह सब इस में दिखाया गया है। पाठक इसे निरी तवारीख मत समझो कि किसी पुस्तक का मक्षिका स्थाने मक्षिका के ढंग का अनुवाद कर दिया गया हो किन्तु ठाकुर गदाधर सिंह ने अपनी प्रौढ़ लेखनी का प्रौढ़त्व इस में भरपूर प्रगट कर दिखाया है। यह पुस्तक उस ढंग की है कि आद्योपान्त इस को पढ़ने वाले के मन में कभी हो नहीं सक्त। कि देशानुराग का बीज न बो जाय। उपन्यास कविता तथा अन्यान्य शृङ्गार रस प्रधान लेख बहुत हो चुके अपनी भाषा में अब ऐसे ही लेखों की आवश्यकता है जिस में पढ़ने वाले के मन में उत्तेजना पैदा हो। मूल्य १) इण्डियन प्रेस प्रयाग में मुद्रित॥

कलवार महा सभा की रिपोर्ट।

रिपोर्ट देख मालूम हुआ कि कलवार जाति बहुत तरक्की पर है। इस जाति में बहुत लोग ऐसे हैं जो लक्ष्मी और सरस्वती दोनो के कृपा पात्र बन रहे हैं। कई एक तअल्लुकेदार महाजन तथा ऊंचे २ रोज़गारी भी इस में हैं। इस रिपोर्ट की एक बात हमे सब से अधिक सोहावनी लगी जो कलवार यह नाम नहीं बदला गया जब बहुधा बर्मा और भार्गव आदि उपाधियों से अपना वास्तविक रूप छिपाय लोग उन्नति के सोपान पर पांव रखने की चेष्टा में प्रवृत्त हैं तब निज वास्तविक गुण कर्म न ढांपना कितनी दूर दर्शिता है। इसमें सन्देह नहीं इस अंगरेज़ी राज्य के अमन चैन में सबी आगे बढ़ने और अपनी उन्नति का यत्न कर रहे हैं एक ब्राह्मण ही दक्षिणा की तकिया के सहारे गहिरी नींद में खुर्राटे भरते हुये इस्त पड़े हैं। कदाचित इन्हों ने समझ रक्खा है कि जो कनछिदे हैं और अपने को

हिन्दू मानते हैं हमारे चंगुल के बाहर हो ही नहीं सक्ते तब क्यों हम अपनी सुख की नींद में बाधा छोड़ैं। किन्तु यह इन की बड़ी भूल है यह चितावनी इन्हें काहे को कभी होना है कि वह समय बहुत दूर गया; तालीम की झलक ने प्रजा के नेत्र खोल दिये अब तुम्हारी एक न चलैगी। बौद्धों के निराकरण के उपरान्त अभी तक देश में ब्राह्मणों की ऐसी ढांक बन्धी थी कि बिना इन्हें अगुआ किये कोई काम नहीं होता था। बाम मार्ग तक में यही अगुआ थे हज़ारों तांत्रिक इस समय विद्यमान् हैं जो वेद का पढ़ना पढ़ाना छोड़ तांत्रिक बन पुजवा रहे हैं पंच मकार साधन में ब्राह्मण ही अगुआ आचार्य और गुरु किये जाते हैं। किन्तु इस समय जो नये २ मत ब्रह्म समाज आर्य समाज सन्त समाज आदि चल पड़े हैं उस में ये ब्राह्मण दूध की मक्खी सा अलग निकाल फेक दिये गये हैं इन समाजियों की यही कोशिश रहती है कि ब्राह्मणों का दखल हम लोगों के बीच न होने पावे वरन इन की जहां तक दुर्गति हो उतना ही अच्छा। इस दशा में इन का न चेतना कितना हानि कारक हमारे सनातन क्रम के लिये है पर क्या किया जाय लाचारी है जब इन्हे चेत होती ही नहीं ॥

साधु ब्राह्मण महात्माओं के कर्त्तव्य।

भारत वर्ष जो एक समय विद्या, सभ्यता धन धान्य, व्यापारादि में सर्व श्रेष्ठ और महोदय था, अत्यन्त शोक की बात है कि आज कल अविद्या, निर्धनता और बहुत कुरीतियों के कारण पापों और मूर्खता में डूबा हुआ है, यहां की विद्या का यश सुन यूरुप का प्रसिद्ध दार्शनिक Philosopher पिथागोरस Pythagorus यहां विद्याग्रहण करने के लिये पांच हज़ार कोस से आया। हमारे महर्षियों और शास्त्रकारों ने विद्या विषय के अनुकूल आज्ञा दी है "विद्या ददाति विनयं विनया-

द्याति पात्रताम् । पात्रत्वाद्धनमाप्नोति धनाद्धर्म्मं ततः सुखम्" विद्याहीन मनुष्य को शास्त्रों में पशु की उपमा दी है और इसी कारण विद्वान् साधु तथा ब्राह्मण की ही सेवा करना या दान देना लिखा है। यहां के शूरवीर अर्जुन भीमसेनादि महात्माओं ने पाताल (अमेरिका) तक को विजय किया। यहां के वैश्य इस देश के उत्तम २ पदार्थों को अन्य २ देशों में बेचकर धनी बने थे। हमारे महर्षि महात्माओं ने चार आश्रम ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ और संन्यासी नियत किये हैं॥

ब्रह्मचारी २५ वर्ष पर्यन्त विद्या का उपार्जन करने के पश्चात् बिबाह करते थे और गृहस्थ लोगों को आज्ञा थी कि विद्वान्, साधु, ब्राह्मण व अतिथि का हर तरह से मान सत्कार करें। वाणप्रस्थ लोग जितेन्द्रिय और विद्वान् बन देश की सेवा और देशोन्नति का उपदेश करते थे। संन्यासियों साधुओं और ब्राह्मणों का कर्त्तव्य था कि स्वयं विद्वान् हो देश २ ग्राम २ फिर विद्या का प्रचार और देशोन्नति का सत्य और शुभ उपदेश करें। इसी प्रकार क्षत्री लोग विद्वान् होकर राजनीति और देश की रक्षा में कटिबद्ध थे।

गृहस्थ लोग कहते हैं कि जब से इन सबों ने विद्या चरित्र की शुद्धता और देशोन्नति का उपदेश देना त्यागा तभी से देश अधोगति को प्राप्त होने लगा। अब साधु संन्यासियों महात्माओं और ब्राह्मणों की सेवा में प्रार्थना है कि वे अपने शुभ कर्त्तव्य के पालन पर पुनः कटिबद्ध हो जावें और पहिले की भांत सब कार्य करें॥

इस उद्देश्य के लिये डेरा इस्माइल खां में एक साधुविद्यालय खुलने वाला है जहां साधुओं को धार्मिक शिक्षा दी जावेगी॥

भवदीय-टहल राम गंगा राम ज़मीन्दार डेरा इस्माइल खां (पञ्जाब)

स्वास्थ्य संपादन।

यह लोक परलोक सम्बन्धी जितने काम हैं सबों में तन्दुरुस्त रहने की बड़ी ज़रूरत है किन्तु हमारे प्रति दिन का आहार बिहार की गड़बड़ी या जल वायु के ज़हरीले हो जाने से हैज़ा और प्लेग आदि रोग पैदा हो जाते हैं। उन से बचने को अमृत तुल्य गुण पैदा करने वाली सद्वैद्य की औषधियां सेवन करना चाहिये। हम सद्वैद्य की बनाई दवाइयों पर अधिक ज़ोर इसलिसे देते हैं कि लिखा है:-

औषधं मूढ़वैद्यानां त्यजन्तु ज्वर पीड़िताः।
पर संसर्गसंसक्त कलत्रमिव बान्धवाः॥

मूर्ख वैद्य की बनाई दवाई वैसाही छोड़ देना चाहिये जैसा किसी परपुरुष के संपर्क से दूषित निज बनिता को लोग छोड़ देते हैं। बहुधा देखा गया है कि मूर्ख वैद्य या हकीम की इलाज से लोग जीवन से हाथ धो बैठे हैं। इस से मेरी प्रार्थना सर्व साधारण से यही है कि सद्वैद्य की बनाई जंची दवाइयों का सेवन करें। तदनुसार मैं ने भी कुछ औषधियां हर तरह के रोगों की तैयार की हैं आप लोग उसे काम में लावें यही मेरी प्रार्थना है॥

पं० सीता राम वैद्य भूषण प्रयाग

REGISTERED No. A—308.

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट है आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ } प्रयाग { अप्रैल
सं० ४ } { सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द की जिल्द मै पोस्टेज ३)

——:0:——

हिन्दीप्रदीप

जि० २८ } प्रयाग { अप्रैल
सं० ४ } { सन् १९०६ ई०

टटकी टटकी खबरें ।

सुनने में आया है अमेरिका से एक जहाज़ भटक कर उत्तरीय महासागर की ओर जा निकला कुछ दूर चल समुद्र का पानी दूध के रंग सा मिला ज्यों २ जहाज़ बढ़ता गया दूध सा वह पानी गाढ़ा होता गया । हमारे पुराने हिन्दुओं का क्षीरसागर कदाचित् यही हो ॥

बिलाइत से एक मासिक पत्र निकलने वाला है जो सात भाषाओं में छपेगा संस्कृत, अरबी, लाटिन, ग्रीक, जरमन, फ्रेंच और इङ्गलिश शर्त उस में यह रहेगी कि इस के खरीदारों की फिहिरिश्त में उसी

का नाम दर्ज़ किया जायगा जो सातो भाषाओं को जानता हो और २७ पौंड सालाना उस का मूल्य होगा ॥

जमइका टापू में चाय के पेड़ की तरह एक पेड़ होता है जिसकी पत्ती आध सेर पानी में उबाल कर पीने से काहिली जेहालत नाइत्तिफाकी खुदगरज़ी की खूब तरक्की होती है। हिन्दुस्तान के लिये इस पेड़ की पत्ती का सेवन बहुत अच्छा लटका है ॥

ब्रिटिश अफ्रिका के पहाड़ों में कई एक झरने ऐसे प्रगट हुये हैं जिन का पानी पीने से शाम्पेन और ह्विस्की का नशा आता है शराबियों की बन पड़ी ॥ १एप्रिल

सबै अलोना लोन बिन।

महात्मा ईसा ने उपदेश देते हुये एक बार अपने शिष्यों से कहा था "तुम ज़मीन के नमक हो यावत् भोजन के पदार्थ सब नमक से ज़ायकेदार किये जाते हैं पर नमक जो आप बिगड़ जाय तो उसे कैसे और किस से मज़ेदार करें" ईसा का यह कथन उस समय यहूदियों की बिगड़ी समाज को लक्ष्य कर कहा गया था। किन्तु अब इस समय हम लोग इस कथन के आदर्श या उद्देश्य हो रहे हैं। इस में सन्देह नहीं सुसभ्य जाति में जितने गुण होने चाहिये हम किसी बात में किसी से कम न निकलैंगे। बुद्धि तत्व का खज़ाना यहां भरा है; इस टूटी दशा में भी धन की कमी नहीं है; आचार की पवित्रता; विचार की बारीकी और गम्भीरता; ईश्वर बुद्धि; धर्म निष्ठा; आचरण की उदारता में तो धरातल में हमारी समता कहीं न पावोगे और आध्यात्मिक शिक्षा तो मानो यहां गिरों सी है जिस का मन हो

यहां आ बटोर ले जाय। दानी हम ऐसे हैं कि सर्वस्व अर्पण कर देने पर भी अभी तक दिये ही जाते हैं, लेना किसे कहते हैं और कैसे लेना होता है सो हम सर्वथा भूल गये। अभी हाल में राजकुमार प्रिन्स आफ़ वेल्स आये थे, काशी में १५००) रुपया खैरात कर गये पायोनियर ने उनके खैरात की तारीफ़ में झड़ी बांध दी, हमारे यहां एक छोटा सा ज़मीदार थोड़ीर बातों में १५ सौ क्या १५ हज़ार के दान को कुछ माल नहीं गिनता। अभी हाल में महाराजा बलरामपूर ने लखनऊ मेडिकल कालिज को बात की बात में ३ लाख दे डाला। वीरता में भी यहां वाले अद्वितीय हैं। किस्से छिपा है कि केवल सिक्ख, गोरखे, बैसवार, और भोजपुरिये सिपाहियों के ज़ोर पर सरकार ने कुल हिन्दुस्तान को अपने हस्तगत कर लिया। नज़ाकत तथा तराश खराश की बारीकी में इँगलैंड और फ्रान्स की सुकुमार सुन्दरियां भला यहां की क्या बराबरी कर सकैं गी। तात्पर्य यह कि हम सभ्यता की सामग्रियों में किसी से किसी बात में हेठे नहीं है, और इस लायक हैं कि ज़मीन के नमक कहे जांय तो उचित है। किन्तु गरमी न रह जाने से हमारे में बिल्कुल फीकापन आ गया है मृतक तुल्य लुहार की धौकनी सा सांस लेते जी रहे हैं। कौमीयत का जोश बुझ जाने से इतने ठंढे पड़ गये हैं कि हमारा धर्म कर्म विद्या तपस्या शास्त्रों का अनुशीलन सबों में फीकापन आ रहा है। बड़े२ तेहवार और उत्सवों में बहुत खुशी मनाते हैं, ब्राह्मणता क्षत्रियत्व तथा खानदानी होने का बड़ा अभिमान करते हैं पर बिचार कर देखो तो काठ की पुतली सा निर्जीव और निस्तेज हैं। गुण, कर्म विहीन, ब्राह्मणत्व, और क्षत्रियत्व का आभास भी न बच रहा शूद्र से अधिक गये बीते हैं। इस दशा में वह खोई दौलत जिसे कौमीयत की गरमी कहैं गे फिर अपने में लाना हमारा प्रधान कर्तव्य है। हम बहुधा स्वामी दयानन्द की प्रशंसा कर उठते हैं, और आर्यसमाज को अच्छा मानते हैं सो इसी लिये कि उस्मे हम कौमीयत की गरमी का अंकुर

पाते हैं केवल थोड़ी सी ऊपरी टांय२ इन्मे से निकल जाय तो ये लोग बहुत काम कर गुजरैं। हमे अपनी हिन्दू समाज पर पछतावा होता है कि जो क्रम गुलामी का इन्मे आ टिका है उस्से तो कभी आशा नहीं होती कि इनका कभी पुनरुज्जीवन होगा। हमी क्या बरन जिस किसी के चित्त में चोट है वे इस बात को अवश्य सोचते होंगे कि क्यों हम नीचे को गिर गये और गिरे जाते हैं उन्हे अपने उद्धार की चिन्ता प्रतिक्षण शल्य के समान बेधती होगी ऐसा पुरुष अपने पराधीन जीवन तक को उभारू और ऊब पैदा करने वाला मानता होगा तब उस्को अपनी और सब बातें क्यों न फीकी लगैं गी। इसी से यह कहावत सार्थक होती है "सबै अलोना लोन बिन" पर पुण्य क्षीण भारत भूमि के ऐसे भाग्य कहां जो और२ बीर प्रसबिनी भूमि के सदृश ऐसे ऐसे उदार चेता बीर पुत्रों को पैदा करती। यहां कायर क्रूर आलसी स्वार्थ के क्रिमि भलेही भरे पड़े हैं और आगे को ऐसी सृष्टि बढ़ती ही जा रही है। हमारे वैदिक ऋषियों को इस्की चोट थी और वे जिस क्रम पर अपने वैदिक धर्म और समाज की रीति नीति चला ग-ये उस्मे Patriatism की महक सब ठौर पाई जाती है जिसे हम कई बार लिख चुके हैं। चार वर्ण की प्रथा का भी यही कारण था कि प्रजा को चार भागों मे बांट अलग २ उनका काम उन्हे सौंप दिया गया। महाभारत के युद्ध तक चारो दल वाले अपने२ काम में सुचेत रहे तब तक देश सर्वाङ्ग सुन्दर बना रहा और कहीं से कोई बात नहीं बिगड़ी थी; अब पूर्ण रीति पर उस्का पुनः संस्थापन अति दुष्कर सा हो रहा है। हमारे उन्नति शील नवयुबक आगे बढ़ने की चेष्टा में लगे हैं पर उस क्रम को छोड़ कोशिश कर रहे हैं इस्से कृत कार्य होने की आशा कम पाई जाती है॥ अस्तु-

---:o:---

तपस्या के जुदे २ क्रम ।

बड़ी २ जटा बढ़ाय कहीं एकान्त स्थान में जन समूह से अलग रहना अब इस समय तपस्या समझी गई है किन्तु सो नहीं है वरन जुदे२ क्रम के लोगों का जुदा २ तरीका तपस्या का है। गृहस्थों के लिये "तपःस्वधर्मानुष्ठानम्" जो जिस जाति का है उसको अपनी कुल परम्परा के अनुसार आंख मूंद चलते रहना तपस्या है। "छात्राणामध्ययनंतपः" पढ़ने पढ़ाने में निन्तर लगे रहना विद्यार्थियों के लिये तप करना है। बाल बच्चों को पालना और घर गृहस्थी का काम काज कुलवती गृहिस्थनियों का तप है। माता पिता की सेवा और उनकी आज्ञा पालन सपूत लड़के का तप है। पति की मन बच कर्म से सेवा पति परायणा पतिव्रता का तप है। टटके २ लेख लिख पढ़ने वालों की दन्तावली का विकास करा देना हमारे लिये तप है। हमारे शहर के अमीर आज़म का तप दिनो रात शराब के नशे में गर्क रहना और रूपा जीवाओं को दोनो हाथों से धन उलचना है। कर्कशा स्त्रियों का तप लड़ना है। बनियों का तप काल मनाना है। कलकत्ते के माड़वारियों का तप हैस की दलाली में विलाइती बाना का भाव तै करना है। कड़ी मेहनत कर आप मोटा झोटा खा दूसरों के लिये स्वादिष्ट अन्न उपजाना खेतिहरों का तप है। कौड़ी २ की किफाइत कर धन को सांप सा बैठे ताकते रहना कदर्य कट्टर सूम का तप है। "जो नहि मानो बात हमार जाव अदालत होहु खुआर" वाले कौल को सच्च करते वढ़े हुये लिटिगेशन के बल कानूनों में हिन्दी की चिन्दी निकाल अपनी तकरीर से सच्च को झूठ, झूट को सच्च कर देना वकीलों का तप है। उठती जवानी वाले रईस के लड़कों को उभाड़ उन्हें मालती या मुन्ना के घर का कुत्ता बनाना मीरशिकारों का तप है। भारत की प्रजा में प्राचीन समय की जातीयता और देशानुराग के पुनरुज्जीवन की चिन्ता शिक्षित समाज का तप है। नये २ परिस्कारों के द्वार शास्त्रार्थों में तीतर बटेर सी लड़ाई के लिये दीक्षित और नागेश की पंक्तियों को रट डालना काशी के पण्डितों का तप है। अर्थ

बोध से कुछ सरोकार नहीं पद् और क्रम सहित समस्त संहिता को कण्ठ किये रहना वैदिक ब्राह्मणों का तप है। परलोक सुधरने की चिन्ता में व्यग्र भोले जी की स्त्रियों को स्वर्ग की रास्ता दिखलाने के बहाने उन्हें जाल में फसाने की फिकिर पुजेरी पंडे तथा कथा कहने वाले व्यास का तप है। पराये को पीड़ा पहुंचाना खलों के लिये तप है। पर उपकार साधुओं के लिये; इत्यादि अनेक नाम रूप से तपस्या के नजानिये कितने भेद और प्रकार हैं कहां तक गिनाते रहैं ॥

माता का ऋण।

मनुष्य के जीवन में ऋण भी आवश्यक बातों में है, और आवश्य-कीय इस लिये नहीं कि चार्वाक मत अनुसार "यावत् जीवेत्सुखंजीवे दृणं कृत्वा घृतं पिवेत्" जब तक जियै सुख से जिये, ऋण चाहे हो जाय घी ज़रूर खाय और दूसरे की कमाई पर तोंद में हाथ फेरते गुलछर्रे उड़ाया करै जिस्का जो कुछ चाहता हो अदा न करै। किन्तु घर गृहस्थी का भार सिर पर लादे हुये को बहुधा ऐसा समय आ जाता है कि बिना ऋण लिये नहीं चलाये चलता और वह ऋण जितनाही भारी आवश्यकता दूर करने को लिया जाता है उतनाही भयंकर है। भयंकर उन्ही लोगों के लिये है जिन्हे लोक परलोक बिगड़ने का कुछ ख्याल नहीं है। महापुरुषों का कथन है कि बिष विष नहीं है, बरन दूसरे का कुछ धराना यथार्थ मे विष है, इस लिये कि विष उसी को मार डालता है जो उसे खाता है ऋण वह विष है कि पुत्र पौत्र समेत तक को उच्छेद कर डालता है। एक ठौर प्रदीप की पुरानी फाइलों में इस्के सम्बन्ध में बहुत अच्छा कहा है ॥

जानत रहे सबहि नर नारी, ऋण हत्या है पाप पहार।
बिना दिये नहिं छूटत कबहुं, तेहि अब समझ लिहिन रोजगार ॥

ऋण जब लूट लेहि पुरखन को, तब सुत गया करन को जाय।
अब सोइ पूत बलिस्टर ढूंढहिं, कवनिहू भांति हज़म होइ जाय॥

इस द्वन्द्व पूरित जगत् में दो तरह के काम होते हैं। प्रगट, और गुप्त, जिस्को देखो और जहां देखो हर एक काम को इन्ही दो के अन्तर्गत पाओगे जो काम हमारी अजानकारी में होता है वह गुप्त है, और जिसे हम अपनी इन्द्रियों के द्वारा प्रत्यक्ष कर सक्ते हैं वह प्रगट कहलावेगा। इस नियम के अनुसार ऋण भी दो प्रकार का है, गुप्त, और प्रगट। प्रगट को यदि विष मानो तो गुप्त ऋण उस्से भी अधिक भयंकर समझना चाहिये। इस लिये कि शत्रु जो छिप के दांव खेलता है वह मैदान में खड़े हो ललकार कर लड़ने वाले से बहुतही टेढ़ा और दुर्जेय है। ऐसे शत्रु से विजय पाने की इच्छा वही कर सक्ता है जो उस्की गुप्त चालों को जानता हो और स्वयम् बलवान् चतुर और सहस्त्रलोचन बन समर भूमि में स्थिर रह सके। प्रगट ऋण को हम उस समय से जानने लगते हैं जिस समय ऋण लेते हैं न केवल हमी वरन घर और बाहर के सबी जानते हैं और उस्के अदा न करने पर जो २ फ़जीहत सहना पड़ता है वह भी किसी से छिपा नहीं रहता। किन्तु गुप्त ऋण को हम तभी जानते हैं या उस्के जानने की चेष्टा करते हैं जब तत्सम्बन्धी किसी काम का असर हम पर आ पड़ता है। माता का ऋण हमारी अज्ञान अवस्था में पैदा होता है इस लिये गुप्त ऋण है और जितने प्रकार के गुप्त ऋण हैं देव पितृ तथा ऋषियों का ऋण सबों में यह प्रधान है। लख चौरासी भरमतेर दीनबन्धु दीनानाथ की कृपा से सर्व श्रेष्ठ और सब सुखों की खान जब हम नर तन पाते हैं उस समय गर्भ में हमारा भार सिवा माता के और कोई नहीं उठा सकता। जब हम महामुग्ध निरे दूध मुहें रहते हैं उस समय हमारी आवश्यकताओं को वही जानती है और उसे पूरी करने का बीड़ा उठाती है। इसी से मनु का वाक्य है "पितुः शतगुणा माता

गौरवेणातिरिच्यते" हमारी स्तनन्धय मुग्ध दशा में यदि जन्म दात्री जननी थोड़ी देर के लिये भी ध्यान न दे केवल अपनेही सुख और आराम का खयाल रक्खे तो हमारी न जानिये क्या दशा हो जाय। जिन भाग्य शालियों को गया श्राद्ध करना पड़ा है और मातृ षोड़शी की है वे माता के उपकार को भरपूर जान सक्ते हैं। मातृ षोड़शी के १६ श्लोक जो पिण्डदान समय पढ़े जाते हैं ऐसा वात्सल्य रस पूर्ण हैं कि उन्हे सुन जी भर आता है और वात्सल्य रस का उद्गार हो आता है। अतः समर्थ होने पर जो माता के ऋण को हम भूल जांय तो हमसा कृतघ्न कौन होगा ऐसे को तो कदाचित् नरक में भी ठिकाना न मिलैगा। बचपन की अज्ञान दशा में बिना मांगेही वह हमारी आवश्यकताओं को पुरै देती है। माता के उपकारों पर दृष्टि रख हमारे यहां के बुद्धिमान् जन धरती गऊ तथा गंगा सबों को माता कह पुकारने लगे। बड़े होने पर हम जो ज्ञानी मानी धनी बनते हैं वह इन्ही माताओं की कृपा है। शरीर की उत्पत्ति का कारण एक माता है; दूसरी माताओं से हमारा पालन पोषण और रक्षा होती है। विचारिये कितनी बड़ी आवश्यकता इन तीनो से हमारी पूरी होती है और जिस से हमारी शारीरिक सामाजिक तथा पारवारिक आवश्यकता दूर हो उस के हम ऋणी हैं। जो आदमी अपनी भलाई को आगे रख उपकार करता है वह कृपण कहा जाता है। इन माताओं के उपकार में इस तरह की कृपणता नहीं है। गऊ गंगा तथा धरती इतना करने पर भी चुप रहती हैं। इस समय देशोन्नति का पाठ सबी कर रहे हैं और सबों की उत्कट इच्छा है कि हमारी उन्नति हो पर इन गुप्त ऋणों के शोधन में कोई दत्त चित्त नहीं है इसी से अनेक आधि व्याधि हमें घेरे रहती है। मनु भगवान् का भी वाक्य है-

ऋणानि तृण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत्।

अनपाकृत्य मोक्षन्तु सेव्यमानो व्रजत्यधः ॥

उन्नति चाहने वाले पुरुष प्रवरों को ऊपर का बचन सदा स्मरण रखना चाहिये और इन ऋणों से मनुष्य कैसे छूट सक्ता है सो हम फिर कभी दिखावेंगे ॥

अनन्त राम पांडे-रायगढ़

——:o:——

पंच का न्याय ।

प्रभात काल होने को है; मुह से मुंह नहीं सूझता; कुल कामिनी सी उषा देवी अपने कमनीय कोमल मुख कमल को अन्धकार पटल से छिपाये हुये घूंघट की ओट से मानो ताक रही है-रेल की लालटेन सा सूर्य्य का बिम्ब अभी धरती के नीचे धंसा हुआ ऊपर उभड़ आने की चेष्ठा में लगा है । निशानाथ चन्द्रमा अपनी प्यारी प्रियतमा निशा के वियोग मे क्षीण और दुर्बल स्त्रैण स्त्रीजितों की लीला दरसाता हुआ पीला पड़ गया है। कांव २ रटता कौवों का दल पक्षियों पर विजय पाने की इच्छा से इधर उधर धावा मार रहा है। बीच २ रेल की सीटी मानो तानसेन के तम्बूरे की ध्वनि का अनुहार कर रही है, वायु को अपने ख़ज़ाने से प्रधूपित करते सड़कों पर मैले की गाड़ी लइन की लइन जा रही है । बगल में लोटा डोरी दबाये झुण्ड के झुण्ड लोग बाहरी ओर जा रहे हैं । धर्मशील माला गले में छोड़े आसन दबाये गङ्गा स्नान को जाते हैं। नगर में ठौर २ मन्दिरों में मङ्गला आरती के लिये घंटा और घड़ियाली का शब्द घहरा रहा है । सड़कों में मौसली कदम्ब आदि पेड़ों पर पुष्प रसलोभी भौंरे पराग के लिये गूंज रहे हैं । माधुमक्षिकाएं भीड़ की भीड़ उस पर टूट रही हैं और शहद बटोरती जाती हैं । ऐसे समय कोट पैंट के थैले में बन्द मुह मे धुआं कस रक्खे पंच जी उखड़े कनकौवे की भांत जा रहे हैं। ऐसा तेज़ कदमी से चल रहे थे कि मुझे यही भासा कि

किसी बड़े जरूरी काम के लिये जा रहे हैं। मैं भी उनके साथ हो लिया और देखा तो एक ऐसे मकान में पहुंचे जिस की सजावट से बोध होता था कि यहां किसी सभ्य समाज की कोई कमेटी होने वाली है। मिस्टर पंच को देखते ही सब लोग खड़े हो गये उनमें से एक नव युवक चश्मा दिये इन को बड़ी नम्रता पूर्वक एक ऊंचे आसन पर लेजाय सुशोभित किया हुटहुट हुर्रे की आवाज़ उस लम्बे चौड़े हाल में गूंज उठी और बात की बात में लोगों की भीड़ से वह स्थान इतना भर गया कि कहीं तिल रखने की भी जगह न बच रही। इस भीड़ में कुछ लोग मोटी तोंद वाले विरक्त सन्यासी थे, कुछ मैली धोती पहने लाला और सेठ थे; सेठ जी कमर में करधनी पहने थे पर उनके मैले कपड़े से ऐसी दुर्गन्धि आ रही थी कि मारे बू के मेरी नाक फटी जाती थी और ओकाई आने लगी। कुछ बछिया पुजौनी विद्या रट पुरानी लकीर के फकीर पण्डित और बिरहमन थे। जो बच रहे वे अर्द्ध शिक्षित रिफार्म्ड हिन्दू थे। सब लोगों के आजाने पर वही युवक जिसकी चाल ढाल से मालूम होता था कि यही इस मीटिङ्ग का अगुआ है उठा और यों कहने लगा। मैं आप लोगों का धन्यबाद करता हूं जिन के पधारने से आज यह सभा कृत्यकृत्य हो गई ऐसी सभ्य गवर्नमेंट के शासन में जब सबी अपनी २ तरक्की कर रहे हैं तब हम लोग कोरी की जाति वाले क्यों पीछे रह गये। ब्राह्मणों ने अपनी प्रभुता जमाने को हम लोगों को च्युत कर दिया और सब भांत हमे हीन समझा पढ़ने लिखने से हमें बंचित रक्खा। यहां तक कि हमारे छू जाने से नहाने का ढकोसला रचा किन्तु अब वह समय गया उन कमबख़्त ब्राह्मणों का ज़ोर सब तरह पर घट गया है अब खुल के हम अपनी उन्नति कर सक्ते हैं खास कर मिस्टर पंच के रौनक अफरोज़ होने पर तो अब हमें अपनी तरक्की की फिक्र करना ही चाहिये। चारो ओर से आवाज़ आई अवश्य अवश्य और फौरन मिस्टर पंच सभापति नियत किये गये जो

कन्दरा सा मुख खोल यों कहने लगे। मैं आप लोगों का धन्यबाद करता हूं और आशा है कि जो कुछ मैं कहूं उसे चित्त दे सुनियेगा और अमल में लाइयेगा। औवलन तो मुझे कोरी इस शब्द को सिद्ध करना है कोरी कौर्मी का अपभ्रन्श है जब भगवान् ने कूर्मावतार लिया तब उनकी नासिका से एक पुरुष पैदा हुआ जो कछुई का दूध पी कर पला उसी कौर्मी का अपभ्रन्श अब कोरी हो गया। अफसोस कि ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न होने से ऐसे प्रतिष्ठित हो गये और ये लोग भगवान् की नाक के बाल हो कर भी तुच्छ समझे जांय; इन्हीं के सम कक्ष मोची हैं जो मोक्षी का अपभ्रंश है और यथार्थ में यह अर्थ चरितार्थ भी हो सकता है कि ये लोग ऐसे उपकारी हैं कि पशुओं की आत्मा देह से अलग कर उन्हें मोक्ष पदवी में पहुचा देते हैं। ये लोग अवश्यमेव उच्च कोटि के हैं हम अपनी नीति निपुण गवर्नमेंट को धन्यबाद देते हैं कि जिस के सुशासन में प्रजा पर ब्राह्मणों के अत्याचार का ओर आ गया है सब लोग खुल के अपनी उन्नति कर सक्ते हैं। मैं आप का बहुत सा समय नहीं लिया चाहता पर इतना अवश्य कहूंगा कि अब यह समय चूकने और सुस्त बैठने रहने का नहीं है। भारत अपनी उन्नति के लिये आप ही लोगों की बाट जोह रहा है जाति पांति पूछै नहि कोय के आधार पर चार बरण की प्रथा अब तोड़ो जहां तक बने अपने शासन कर्ताओं का हर एक बात में अनुकरण करो। अपने को रिफार्म्ड कहो बिधवा बिबाह जारी करो पर देखो बाल्य बिबाह को भूल से भी न रोकना क्योंकि इस में दो बात का भय है एक यह कि बिधवाओं का नम्बर घट जायगा दूसरे यह कि इस के खिलाफ गवर्नमेंट कोई ऐक्ट् कहीं न पास कर दे। गवर्नमेंट के कृपा पात्र बना चाहो तो कर्मचारियों की हां में हां मिलाते रहो। कितने बेअक्लि समझते हैं कि सर्कार टैक्सों से हमें जकड़े हुये है सोचो तो कितना टैक्सों से वह हमें बरी किये है जैसा यहां की

आबो हवा पर प्लेग आदि प्राणान्तकारी रोगों पर कितनी तरह की फ़ज़ूल खर्ची और कुरीतियों पर इत्यादि इतना कह मि० पंच बैठ गये सभा का बिसर्जन हुआ वोट आफ थैंक्स की गठरी पंच के सिर पर लाद लोग चंपत हुये ॥

X. Y. Z.

प्राचीन कवि और ग्रन्थकार।

भामह

ये महाशय प्रसिद्ध अलङ्कारिक हैं। इनका निवास स्थान कश्मीर था। काव्य प्रकाश के टीकाकारों ने निज रचित टीकाओं में कई स्थानों में इन का नाम दिया है। भामह के रचे ग्रन्थ पर भट्टोद्भट ने विवरण किया है यह बात वामनाचार्य झलकीकर ने भी लिखी है और इस के प्रमाण में वे प्रतीहारेन्दु राज का वाक्य उठाते हैं। वह वाक्य यह है। "स्पष्टमिदं भामह विवरणे भट्टोद्भटेन"। विद्यानाथ, रुय्यक, अभिनव गुप्त आदि अलङ्कार शास्त्र के ग्रन्थकारों ने स्थान २ पर भामह का उल्लेख किया है। काव्य प्रकाश में भी मम्मट ने जहां तहां भामह के ग्रन्थों से श्लोक उठा के रख दिये हैं। इन सब बातों से विदित होता है कि भामह एक प्राचीन ग्रन्थकार हैं। ये महाशय दण्डि कवि के पीछे हुये होंगे पर भट्टोद्भट से अवश्य पूर्व हैं वा उनके समकालीन हैं क्योंकि उनके रचित ग्रन्थ पर भट्टोद्भट ने विवरण लिखा है। भट्टोद्भट का समय निरूपण करते समय हम पहिले लिख आये हैं कि वे कश्मीर के राजा जयापीड़ के सभासद थे और जयापीड़ का समय राज तरङ्गिणी के आधार पर सन् ७७९ ई० से ले के सन् ८१३ ई० तक निर्दिष्ट हुआ है। अत एव बहुत सम्भव है कि खीष्टीय ८वीं सदी के लग भग वा उस के पूर्व भामह वर्तमान रहे हों।

श्रीयुत एडवर्ड कावेल साहिब ने जो प्राकृत प्रकाश नाम सटीक प्राकृत का वररुचि कृत व्याकरण छपवाया है उस में भामह विरचित

टीका है परन्तु ये भामह प्रसिद्ध काश्मीरी आलङ्कारिक हैं वा और कोई से निर्णय नहीं हो सक्ता। सम्भव है कि भामह वैयाकरण कोई दूसरे ही हों। कविराज मार्कण्डेय ने निज रचित प्राकृत सर्वस्व मे लिखा है—

शाकल्य भरत कोहल बररुचि भामह वसन्तराजाद्यैः।
प्रोक्तान्ग्रन्थान्नाना लक्ष्याणि च निपुणमालोक्य ॥
मार्कण्डेयकवीन्द्रः प्राकृतसर्वस्वमारभते ॥

जिस से स्पष्ट अनुमित होता है कि भामह बररुचि के पीछे और बसन्त राज से पहिले हुये हैं। बररुचि तो सम्भवतः वे ही महाशय हैं जो विक्रमादित्य के नवरत्नों में गिने गये हैं पर बसन्त राज कौन हैं इन का पता नहीं लगता। बसन्तराज ने प्राकृत सञ्जीवनी नाम ग्रन्थ तो लिखा है पर उस में अपने समय का उल्लेख नहीं किया। एक और भी ग्रन्थ बसन्त राज शाकुन के नाम से प्रसिद्ध है पर उस में उन्होंने अपने समय का उल्लेख नहीं किया। उस के द्वारा भी ग्रन्थकार के समय निर्णय में कुछ सहायता नहीं मिलती। बररुचि से पिछले होने के कारण वैयाकरण भामह ख्रीष्टीय छठवीं शताब्दी के पहिले के व्यक्ति नहीं हैं। पर बररुचि से वे कितने पीछे हुये इस का भी निरूपण दुर्घट है॥

——

भारवि।

किरातार्जुनीय महा काव्य के रचयिता महा कवि भारवि को संस्कृत भाषा में रुचि रखने वाला ऐसा कौन होगा जो न जानता हो। पर इन के समय और देश के विषय में ठीक २ पता लगाना एक कठिन कार्य है। अपना कुछ भी परिचय ग्रन्थ में कवि ने

नहीं दिया है। किरातार्जुनीय को छोड़ और कोई ग्रन्थ भारवि का बनाया सुनने वा देखने में नहीं आया। प्राचीन शिला लेखों में से एक जो सन् ६३४ ई० में लिखा गया है वह महा कवि कालिदास के साथ भारवि का उल्लेख करता है।

जिस से स्पष्ट ज्ञात होता है कि सन् ६३४ ई० तक भारवि अपनी कविता द्वारा कालिदासवत् प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे। कई एक श्लोक संस्कृत जानने वाले पण्डित बहुधा कहा करते हैं जिन में भारवि का नाम माघ आदि कवियों के साथ मिला हुआ है। वे श्लोक यथा–

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते च पुनर्माघे भारवेर्भारवेरिव॥
उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
नैषधे पद लालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥

इत्यादि और भी कई एक श्लोक भारवि के महा कवि होने की प्रसिद्धि के परिचायक हैं। परन्तु सन् ६३४ ई० के शिला लेख में भारवि का नाम मिलने से इतना तो प्रायः निश्चित हो जाता है कि भारवि ख्रीष्टीय छठवीं शताब्दी के पूर्व थे। इसी कारण भारवि का समय सन् ५५० ई० से ६०० ई० तक के लगभग रमेशचन्द्र दत्त आदि महाशयों ने माना है। यह किस देश के निवासी हैं इसका उत्तर देने में कुछ लोगों ने उनके ग्रन्थ में सह्य पर्वत का नाम देख उन्हें दाक्षिणात्य ठहराया है।

भारवि ने निज ग्रन्थ के आरंभ में श्री शब्द का प्रयोग किया है। उस ग्रन्थ के पंचम सर्ग ३९ श्लोक में 'आतपत्र' 'शब्द' आने से इन की उपाधि

आतपत्र भारवि' प्रसिद्ध है।

माघ काव्य और किरातार्जुनीय की रचना और वर्णन प्रायः मिलते से हैं जिस से पण्डित ईश्वर चन्द्र विद्या सागर ने यह अनुमान किया कि भर्तृहर के तीनो शतक को देखके माघकाव्य बनाया गया होगा। सो बहुत सम्भव जान पड़ता है क्योंकि दोनों काव्यों का प्रारम्भ श्री शब्द से है। दोनो में जल क्रीड़ा, मधुपान और विलास का विस्तार से वर्णन है। दोनोमेके एक २ सर्ग में चित्रकाव्य में युद्ध का वर्णन किया है। ऋतुओं का भी भलीभांति दोनो काव्यों में वर्णन है। पर माघ भारवि के पीछे हुए हैं इस कारण माघ ने भारवि का अनुकरण किया ऐसा कहना ठीक जंचता है।।

कथानक प्रचलित है कि भारवि के पिता इनकी अद्भुत प्रतिमा शक्ति पर मन ही मन बहुत प्रसन्न थे पर ऊपर से सदा उन्हें कटु वचन सुनाते और डांटा करते थे। एक दिन पिता ने कुछ ऐसे कटु वचन सुनाये कि भारविसे न सहे गये रात्रि को एक तलवार लेकर पिता के शयनागार में छिप रहे और उन्हें मार डालने का सङ्कल्प किया। दैवात् उस रात्रि को चांदनी खिली थी भारवि की माता ने अपने स्वामी से कहा देखो कैसी निर्मल चांदनी है तब इन के पिता ने उत्तर दिया हां चांदनी वैसी निर्मल है जैसी मेरे पुत्र की बुद्धि। भारवि यह सुन पितृ घात के संकल्प से निवृत्त हुए और जाके उनके चरणों पर गिर अपने कुत्सित सङ्कल्प को सुनाय क्षमा प्रार्थना करने लगे (पर पिता ने फिर भी उनकी बहुत कुछ भर्त्सना की। इस कथानक से भारवि के स्वभाव का अच्छा परिचय मिलता है।।

किरातार्जुनीय में ठौर २ पर अच्छे नीति सार गर्भित वाक्य पाये जाते हैं जिन्हें बहुधा पण्डित लोग उदाहरण में उठाया करते हैं॥

सुशीला पहले के आगे से ।

यह भूतिन अपनी कठोर आवाज़ को और कठोर बनाकर बोली "अरे तू कहां से और किस लिये आई है ? कुछ समय तक तो सब चुप रहे अन्त को सौदामिनी की मा बोल उठी,, क्या तू अपनी पुत्रवधू को नहीं पहचानती ।

इसने उत्तर दिया "तू क्या बेतुकी बात कह रही मेरी पुत्रवधू और इस दशा मे -

सौदामिनी की मा क्रोध मे भर "तो क्या तुमने अपने पुत्र का बिवाह ८ वर्ष पहले दानापुर के ज़मीदार की पुत्री से नहीं किया ?

क्यों नहीं किया किन्तु वह तो व्यभिचार दूषित हो अपने मा बाप को भी छोड़ बैठी । वज्रपात सदृश यह वचन सुन सौदामिनी मूर्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ी । इसकी मा का सारा शरीर क्रोध से कांपने लगा। किन्तु ज्यों त्यों अपना क्रोध शान्त कर प्राण से अधिक प्यारी पुत्री को सावधान और सचेत करने के यत्न में लगी और बीच २ कहती जाती थी हाय मुझ सी अभागिनी दूसरी कौन होगी । उसी समय देव पत्नी सी एक दूसरी स्त्री भी सौदामिनी को सावधान करने में प्रवृत्त थी और यह उसी की सौत थी ॥

दूसरा प्रस्ताव–पति पत्नी ।

पाठक कुछ समय के लिये सौदामिमी को यहीं छोड़ इसके एक मात्र प्राणाधार की भेट अब आप से कराते हैं । देखिये वह क्या कर रहा है तब तक सौदामिनी की भी मूर्छा भंग होने दीजिये ॥

इसी बड़ी महल की एक दूसरी सजी सजाई कोठरी में एक सुन्दर नवबयस्क युवक निद्रा देवी की गोद में पड़ा दूध के फेन समान कोमल सेया पर सोता है और यही सौदामिनी का प्राणाधार है नाम

इसका योगीन्द्रनाथ है। यह सुशिक्षित और स्वच्छन्द विचार का युवक था। परन्तु दुर्भाग्यवश पिता के वश में था और मूर्ख तथा अभिमानी पिता के हठीले स्वभाव के कारण इसे अपने बाप की इच्छा के अनुकूल चलना पड़ता था। इसी लिये उसको अपना जीवन संसार में भार रूप भासता था। घर के किसी काम काज में उसे हाथ डालने का कोई अधिकार न था अनुद्योग के कारण वह अपना बहु मूल्य समय नीद तथा आलस्य में बिताता था। दिल बहलाने को उसने केवल दो बात अपने लिये पसन्द कर लिया था पढ़ना और घोड़े की सवारी। पिता भी इस की इन दोनों बातों में कुछ बाधक न था॥

आज योगीन्द्र दो पहर को भोजनोत्तर नीन्द में पड़ा करवटें भर रहा था कि इतने में एक बूढ़ी दासी जो लड़काई में इसे दूध पिलाया और खिलाया था इस लिये बहुत ही मुहलगी थी इसे सोते से जगाया और बोली तुम्हे क्या खबर कि आज तुम्हारे यहां कौन आया है॥

कौन आया है यह मुझे क्या मालूम तूने मुझे सोते से क्यों जगाया। आह दाई तूने मुझे नीद से जगा दिया यह ठीक नहीं किया॥

दासी-बाबू तुम अपनी मा की कोठरी में जाव और देखो कौन आया है। आने वाला तुम्हारे बिना बुलाये ही आकर तुम्हारे चरणो का सहारा पाने की आशा कर रहा है। मुझ पर क्रोध न कर जाय देखो तो वह कौन है॥

योगीन्द्र अपनी कोठरी से वेग के साथ चल खड़ा हुआ किन्तु वीच में अपनी स्त्री को आंसू बहाते देख अचम्भित सा हो बोला। प्रिये यह क्या! ओस के बिन्दु गुलाब की पखुरियों को दबाते हुये भी शोभा दे रहे हैं! प्रिये कौन सी दुर्घटना आ उपस्थित हुई कि तुम्हारा मुखचन्द्र मलिन हो रहा है? आसुओं की धारा तुम्हारे स्निग्ध कोमल कपोल की ललाई को क्यों धोये देती है? मुरझाये हुये गुलाब की सी तुम्हारे

मुख की अनोखी छवि देख मुझे अनेक शंकायें होती हैं। संकोच छोड़ कहो न जो खुल तुम्हे कहना हो॥

यह बोली कहूं क्या। इस आगन्तुक अबला को देख मुझे शंका हुई है कि आप मुझे भी एक दिन ऐसाही छोड़ बैठेंगे। इस लिये कि अपनी ब्याही को निरपराध छोड़ बैठना तो कुछ बात ही नही है वरन यह तो आपके घराने की चाल सी है॥

योगीन्द्र नहीं प्रिये सो नहीं वह तो व्यभिचार दूषित हो गई है॥

आप उसके प्राण पति परमेश्वर और सर्बस्व सो भी ऐसा ही समझते हो तौ वह निरपराध साध्वी निः शरण अब किसका शरण लेने आय बरन उस अगतिक की गति अब आप ही हो। हा धिक्कार अबला जन्म को। आप भोले जी के हैं किसी के झूठ सच कहने को जल्द विश्वास कर लेते हो। मैने तो सौदामिनी को अभी ही देखा है पर उसके बे बनावटी वर्ताव और अकुटिल हृदय के भावों से जान गई कि वह चरित्र और पवित्रता के वर्ताव में अद्वितीय है। ऐसी ललना ललाम जिस घर में हों मै उस घर को स्वर्ग भूमि और उसके पति को पुरुषोत्तम मानती हूँ। इस तरह यह बराबर सौदामिनी की प्रशंसा में प्रवृत्त रही॥

योगीन्द्र इसकी ये बातें सुन शरमा सा गया अपनी कोठरी से जाता हुआ मन में सोचने लगा यह ठीक कह रही है सौदामिनी यदि व्यभिचारिणी हो गई होती तो मेरे यहां फिर आने का साहस उसे न होता न उसके सौन्दर्य्य में इतनी दमक बाकी रहती। सौदामिनी और उसकी माता योगीन्द्र को आते देख मा बेटी से अलग हो एक ओर जा खड़ी हो गई। योगीन्द्र पास पहुंच धीमेस्वर से पुकार उठा सौदामिनी-पति के पुकारने को सुन ढाढस आई आशा को मन में

स्थान दे एक ओर खड़ी हो गई और अपना प्रति समक्ष घूंघट को थोड़ा हटा लिया जिस में योगीन्द्र पर उसके चन्द्रानन का भली भांति उजास पहुंच सके और उसके मन का भ्रम अन्धकार दूर हटै। योगीन्द्र उसका देवाङ्गना सा रूप देखतेही मोहित हो गया और चाहा कि उसका हाथ पकड़ै किन्तु सौदामिनी यह कहते हट गई। मै अपराधिनी जारिणी हूं मेरा स्पर्श कर आप अपने को क्यों अपवित्र करते हो जान बूझ अपने को भ्रष्ट मत करो। सर्वेश्वर तुम्हें सुख और समृद्धि दे। मै आप की प्रथम पत्नी अपवित्र हो गई हूं तो अब हाथ जोड़ बारम्बार यही प्रार्थना है कि इस दूसरी के साथ भी ऐसाही बर्ताव न करना। नेत्रों से आंसू टपकने लगे जिस से उसके गुलाब के रङ्ग के कपोल भींज गये और मुग्ध सी हो गई। क्रमशः

अंगरेज़ी शिक्षा और अंगरेज़ी सभ्यता।

शिक्षा और सभ्यता इन दोनो के बारे में पहले इस के कि हम आगे बढ़ें इतना सूचित कर देना उचित है कि ये दोनों जुदी २ बात हैं किन्तु दोनो का ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है कि एक को दूसरे से अलग करना टेढ़ी खीर है। तथापि इतना स्मरण रहै कि नई रोशनी का विष जैसा अंगरेज़ी सभ्यता में है वैसा अंगरेज़ी शिक्षा में नहीं। अंगरेज़ी शिक्षाPlus प्लस अंगरेज़ी सभ्यता जैसा हानि पहुंचा रही है वैसाही शिक्षा Mynus मइनस सभ्यता लाभदायक है। कौन न मानेगा कि शिक्षा हमारे लिये नेत्रोन्मीलन हुई इस से हमारे नेत्र खुल गये और हमे सब सूझने लगा। आंख खुलते देर न हुई थी कि नूतन सभ्यता ने आ दबाया और ऐसा भरपूर कदम जमाया कि हम अपने को उसी के रंग में रंग गये। मुसलमानी शासन में मुसलमानों के रंग ढंग पर ढुलक आर्द्ध यवन तो कभी के बने थे अब इस सभ्यता नें हमे फिरंगी बनाना आरंभ किया केवल नाम मात्र को हिन्दू या आर्य जो कहो सब सही।

जिस को अपने स्वत्व की पहचान न रही और अपने वास्तविक रूप को भूल गया कुत्ता की खसलत वाला उस का फिर क्या। जहां टुकड़ा मिला वहीं दुम फटकारने लगा। अच्छा कहा है-

अधोधः पश्यतः कस्य महिमा नोपचीयते ।
उपर्युपरि पश्यन्तः सर्व एव दरिद्रति ॥

अपने से नीचे को देखने वालों में किस की महिमा नहीं बढ़ती अपने से ऊपर देखते हुये सब दरिद्र हो जाते हैं। अपने से कम वाले को देख सन्तोष होता है कि हम इस से अधिक हैं। इसे एक जून भूरी रोटी भी नहीं मिलती हम दोनो जून स्वादिष्ट भोजन करते हैं ईश्वर का धन्यवाद है। ऊपर अपने से अधिक वाले को देख असन्तोष और डाह होती है उतनी अधिक समाई या लियाकत वाले का अनुकरण करने लगते हैं फल यह होता है लेई पूंजी सब खो बैठते हैं और हंसे जाते हैं। यही हाल इस नई सभ्यता के अनुकरण मे हमारा हुआ मसल है। "सोवैं भुसौले सपना देखैं लाख टके का"-"सूरत चुड़ैलों की मिज़ाज परियों का" घर के भीतर रहन सहन जैसी असभ्यता की और निकृष्ट है कि देख घिन होती है पर बाहर बाबू साहब अहल विलाइत से भी दो बालिश्त आगे बढ़े हुये हैं जिस्का निष्कर्ष यही ठहरा कि सुशिक्षा केवल ऊपर की टीम टाम मात्र है और यही उनके मत में तरक्की है। शराब पीना; न्याय अन्याय का ख्याल न कर जैसे बने रुपया बटोरते रहना देह को खूब आराम पहुंचाना; विषयास्वाद में डूबे रहना; अपने मतलब में कहीं से ज़रा कसर न पहुचने पावे; यही सब उनके अनुसार उन्नति है। देश की उन्नति एक बहाना मात्र है वास्तव में अपनी उन्नति उनका मुख्य उद्देश्य है और यही सब हमारे कर्म्मचारियों के भी आंख का काटा है जिसे देख वे भीतरही भीतर

हंसते हैं और अपनी बराबरी करना मानते हैं। पाठक अब आप ने समझा सभ्यता मिश्रित शिक्षा का क्या रूप है। अब चलिये ज़रा उस ओर को भी मुह मोड़िये जहां केवल शिक्षा है नूतन सभ्यता का लगाव नहीं हुआ। हम ऊपर कह आये हैं अंगरेज़ी शिक्षा से हमारा नेत्रोन्मीलन किया गया जो शिक्षा हमे पहले के ऋषि दे चुके थे और जिसे हम काल पाय भूल गये थे इस शिक्षा से उसी ओर हमारा ध्यान गया जैसा कोई गहरी नीद में पड़ा सो रहा हो सहसा जाग उठै--इस तरह का इस नई शिक्षा का प्रभाव उन्ही मे व्यापा जो उच्च कुल प्रसूत रहे जिनमे संयम और आत्मदमन Self controle का अभ्यास पहिले से पड़ा था। जैसा आग की चिनगारी कहीं पड़ी हो कंजा गई ज़रा दो फूक मारने से एक बारगी धदक उठे। उच्च कुल से हमारा प्रयोजन ब्राह्मणों का है हम यह कभी न कहैंगे कि और लोगों में वह आग नहीं दधक उठी किन्तु अधिक तर उन्में के विलायती सभ्यता के चंगुल में पड़ शिक्षा के सात्विक गुणों से अलग पड़े रह गये। संसार से सदा विरक्त रह कर भी संसारियों के उपकार में लगे रहना हमारे पूर्वज ऋषियों का क्रम था परंपरागत वह बात कहीं २ जो देखी जाती है तो कोई २ इन ब्राह्मणोंही में। एशिया यूरोप अमरिका आदि देशों के लोग पराक्रम व्यापार शस्त्र विद्या विज्ञान, छल, कलाकौशल आदि में कितनाही निपुण हों पर ऋषियों के वंशधर ब्राह्मणों का स्वभाव सिद्ध सन्तोष निस्पृहता और ब्रह्मज्ञान उन्में न आवेगा। तालीम का सर्वोत्कृष्ट गुण चरित्र की पवित्रता तथा सद्व्यवहार और इतने पर भी निरभिमान यह अधिक तर उन्में न पाओगे जो नूतन सभ्यता में पगे हुये हैं। उसका कुछ लेश मात्र यदि कहीं बच रहा है तो किसी २ इन सुशिक्षित ब्राह्मणोंही में जहां सभ्यता ने ज़ोर नहीं पकड़ा। कदाचित् इसी से हमारे यहां के ग्रन्थों में ब्राह्मणों को महीसुर "पृथ्वी पर देवता स्वरूप" लिख दिया है। इतना सब होने पर भी ऐसों को अभिमान नहीं होता जहां रहते हैं लोगों को

अपना महत्व जतलाते नहीं फिरते पर अपने स्वाभाविक तेज से छिपते भी नहीं स्वामी रामतीर्थ सरीखे महानुभाव आप के सन्मुख हैं ऐसे कितने और भी गुप्त पड़े हैं। यदि कहीं भारत ऐसोंही के बल पर आगे को उठने की आशा कर रहा है तो अत्युक्ति न होगी। भारत की प्राचीन सभ्यता ब्राह्मणोही के सहारे चटकी थी अब भी उन्ही का मुह जोह रही है। सच मानिये अधिकांश देश की दुर्दशा केवल ब्राह्मणोही की जिल्लत और बेकदरी से है। इनके पहिले के पुरुषों में तो बड़ा त्याग था अब भी उस्का थोड़ा अंश किसी २ मे बना है। आप राज पाट ऐश्वर्य सब का भोग करते रहो इन्हे केवल वही दक्षिणा से काम--दक्षिणा मिलजाय आपके ऐश्वर्य की कभी स्पृहा न करेंगे प्रत्युत दक्षिणा के बदले मोटरियों आशीर्वाद का ढेर लगादेंगे। तो सिद्ध हुआ केवल शिक्षा बहु मूल्य रत्न है जो सभ्यता का संपर्क उस्मे न होने पावे। ज्यों २ यह सभ्यता बढ़ती जायगी हम हीन होते जांयगे यह सभ्यता ही है जो देशी वस्तु |का प्रचार खुल के नहीं करने देती। हे सर्वस्वापहारिणी नूतन सभ्यता तुम्हें साष्टांग प्रणाम है तुम ने हमारा सोने का घर कांच और मिट्टी का कर दिया तौभी तुम्हें सन्तोष नही आया अभी आगे और क्या२ किया चाहती हो अस्तु।

विज्ञापनो का किब्लेगाह महाविज्ञापन।

प्रमेहारि चूर्ण आदि पुरानी बीमारियों की अनेक दवाइयां बड़े २ प्रशंसा पत्रों के साथ आपने मंगाई होंगी तौभी बहुत सी नई बीमारियां ऐसी हैं जिन का पता कदाचित् शुश्रुत और बाग भट्ट के पिता को भी न रहा होगा-मैने सर्व साधारण के उपकारार्थ उन बीमारियों की दवायें बड़े परिश्रम से संग्रह की हैं-आज उनको उक्ति युक्ति सहित प्रकाश किये देता हूं जिसे मंगाना हो लिख भेजै मै वी-पी- द्वारा फौरन भेज सक्ता हूं--

सभयता बटी। कोई कैसाही असभ्य हो नीचे लिखे अनुसार एक महीना लगातार इसके सेवन से सभ्य हो जायगा। अङ्गरेजी कपड़ा पहिनें; हैट और चश्मा लगाये। इङ्गलिश क्वार्टर में रहै। जहां तक बनै घर में अङ्गरेजी शब्दों का प्रयोग करै। घरवाली को साथ ले सांझ को बाहर हवा खाने जाय। खूब शराब पिये। अपने को हिन्दू कहते शरमाय। मूल्य १ डिब्बी का १ बइबिल।

कौमीयत संपादन चूर्ण। कैसा भी बुझी तबियत का नामर्द हो इसके सेवन से कौमीयत का जोश फौरन आ जाता है। उच्चकुल का अभिमान रक्खे पर आचरण में महा नहा नीच हो आठ कनौजिये नौ चूल्हे की भांत सह भोजन का बड़ा विरोधी रहै। बाल्यविवाह जारी रक्खे। दूसरे को तरक्की करते देख हंसे और हसद करै। दूसरे का बनता हुआ काम बिगाड़ अपने स्वार्थ साधन से न चूकै। मूल्य १ डिब्बी का १ फूट और ५ सेर बैर॥

धर्म बर्द्धक अवलेह। कोई कैसा भी अंगरेजी पढ़ा हो उसे कट्टर सनातन धर्मावलम्बी बनाना हो तो निम्न लिखित दवाइयों को छीले पेड़े या उबाले हुये मगद के साथ खाने से ठीक हो जायगा। नित्य गङ्गा स्नान करने जाय कार्तिक भर यमुना ज़रूर नहाय और वहां नगर की सुन्दरियों पर एक टक्क दृष्टि जमाने का अभ्यास करै तिलक। इतना लम्बा चौड़ा लगावे कि आध मील के फासिले से देख पड़े। स्वयं कितना भी दुश्चरित्र और पापाचारी हो पर दूसरों के साथ भोजन मे परहेज करै। पर उपदेश मे कुशल और प्रवीण हो किन्तु अपने जघन्य आचरण भूल जाय। दाम १ शीशी का धर्म सेवक की उपाधि॥

पण्डित प्रवाल--जिसे पण्डित बनने की इच्छा हो वह इसके सेवन से जल्द बड़ा विद्वान् होसक्ता है--लम्बी धोती बगल बन्डी भारी मगवा या पगड़ी-बोलने में दन्त्य'स'को तालव्य'श'कहे--बात करते बीच २ में

है सो कहता जाय। नाम के आगे आचार्य आदि लिखै। किसी बात के निर्णय मे अपनी हठ रक्खे। जैसी दक्षिणा पावै वैसी व्यवस्था दे दे। बात चीत में चर्पर और मुखर हो "पाण्डित्यं चापलंवचः" अपनी प्रतिष्ठा जमाने के लिये सच्च को झूठ झूठ को सच्च सिद्ध कर दिखावे। अमीरों के रिझाने को भड़ौआ बकना भी सीखे हो। सन्ध्या तक चाहो न करता हो पर दम्भ में स्नातक और श्रोत्रियों का भी गुरू हो। दाम १ शीशी का ५ सेर सुंघनी!

लेखक रसायन महामृगाङ्क॥ लिक्खाड़ बनना चाहता हो उस के लिये यह अमृत तुल्य गुणकारी है। उपन्यासों को पढ़ लेखक बनने का दम भरै खड़ी बोली में टूटी फूटी कविता या तुक बन्दी करना जानता हो। हरिश्चद्र आदि पुराने लेखकों के लेख में भूल निकाले। शुद्ध शब्द लिखना चाहो न जानता हो पर संपादक बनने का हौसिला रखता हो। हरदम जोश खरोश में भरा हो और गवर्नमेंट के इन्तिज़ाम में भूल निकाला करे। दाम १ पुड़िया का हिन्दी प्रदीप के नादिहन्द ग्राहकों की बेशर्मी।

मेम्बरी प्राश। यह एक आशव 'शरबत' है इसको १ टैमलेट रोज़ पी लेने से कौंसिल की मेम्बरी अथवा म्युनिसिपल मेम्बरी बहुत आसानी से मिल सक्ती है। इसके कई एक जुज़ डाक्टरी और हकीमी से भी संग्रह किये गये हैं इस से इस आशव में डाक्टरी यूनानी मिसरानी तीनों हिकमतों के गुण हैं और वे जुज़ ये हैं। कल-क्टरसाहब की हां में हां का सत्त ३ तोला--म्युनिसिपिलिटी की सफ़ाई का इत्र तीन पाव--लोगों में प्रतिष्ठा और आबरू का आब (पानी) अक्युआप्यूरा की जगह २ सेर--हौसटेक्स और चुंगी का स्वा-रस्य ३ छटांक--मेम्बरों में आपस की पारटी फीलिंग का गूदा सवासेर एलेकशन के समय बोट देनेवालों की खुशामद और पैगाम का बुरादा ६ माशे-१ कराबे का दाम--बोट न आने से मेम्बरी में नाकामयाब होने वालों के घर की उदासी।

X. Y. Z.

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने क पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै॥
सूझै विवेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै॥

जि० २८ सं० ५	प्रयाग	मई सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १)

——:००:——

हिन्दीप्रदीप

जि० २८ सं० ५ | प्रयाग | मई सन् १९०६ ई०

प्राप्त ग्रन्थादि ।

अनन्त ज्वाला ।

मिस्टर चार्ल्स कृत अंगरेज़ी पुस्तक के आधार पर चीन दर्पण आदि कई पुस्तकों के रचयिता महेन्दुलाल गर्ग ने इस को रचा है--इस में रूस और एवैकसी के पास और कासपियन् आदि के तट वर्ती देशों का तथा वहां के निवासियों की रहन सहन व्यापार आदि का विस्तृत वर्णन है जिसे पढ़ जी रमता है-मूल्य ॥) मिलने का पता--सुख संचारक प्रेस मथुरा ॥

गायत्री भाष्य ।

पं० जगन्नाथ मिश्र विरचित इस में ३८ प्रकार का अर्थ गायत्री का किया गया है। गायत्री की स्तुति, उस के जप आदि का माहात्म्य तथा गायत्री के सम्बन्ध में हमारे यहां के ग्रन्थों में जो कुछ लिखा गया है उस सब का संग्रह जैसा इस में है वैसा कहीं न मिलेगा। ग्रन्थ संग्रह करने योग्य है पं० जगन्नाथ जी की योग्यता इस के अवलोकन से विधिवत् प्रगट हो जाती है। बिना मूल्य पुस्तक वितरण की जाती है इस का विशेष धन्यवाद ग्रन्थकर्त्ता को है॥

जपानी बोल चाल ।

इस में जपान की बोल चाल के शब्द देव नागरी अक्षरों में दे उन के माने उन्ही शब्दों के नीचे दिये गये हैं और उसी भाषा के छोटे २ जुमले भी मै माने के दिये गये हैं। जपानी भाषा का कुछ परिज्ञान इस से हो सक्ता है। प्रथम भाग बाबू प्यारेलाल वृष्णी रचित मूल्य ॥) जगद्विनोद यंत्रालय अलीगढ़ में छपी है॥

Practical Telegraph. तार चलाने की विद्या का गुरु इस मे दिया गया है तार चलाना सीखने के लिये बड़ी उपयोगी है। मूल्य ॥) जगत विनोद प्रेस अलीगढ़ में छपी है-मूल्य दोनों का अधिक है॥

मोहिनी मन्त्र ।

सामुद्रिक विद्या की यह पुस्तक है स्त्री और पुरुष दोनों के एक२ अंग का लक्षण और उनका फल इस में दिया है--पुस्तक बड़े उपकार की है बा०मोहन लाल गुप्त रचित-जगत विनोद प्रेस अलीगढ़ की छपी॥

गौरी दिगम्बर प्रहसन ।

यह प्रहसन संस्कृत में तिरहुत के रहने वाले पं० शंकर मिश्र का बनाया है। हमें यह प्रकाश करते हर्ष होता है कि संस्कृत में भी प्रहसन अब तक बनते जाते हैं। यद्यपि इस का लेख संस्कृत के पुराने

कवियों के साथ तो जोड़ नहीं खाता तौभी संस्कृत में एक नई रचना पुराने नाटकों के क्रम की है-इस से प्रशंसनीय है मूल्य ।=)

छुधा कर चूर्ण ।

जैसा नाम वैसा ही गुण भी इस का है खाने में स्वादिष्ट भूख बढ़ाता है और पाचक भी है-दाम १ शीशी का ।) मिलने का पता ब्रह्मचारी ब्रह्मानन्द राज मन्दिर शीतलाघाट बनारस ॥

मूर्ति पूजा ।

स्वामिवर हरिप्रसाद कृत-यह ग्रन्थ बड़ी प्रौढ़ संस्कृत में लिखा गया है । ग्रन्थ के अवलोकन से ग्रन्थकार का दर्शन में प्रचण्ड पाण्डित्य प्रगट होता है । इस में मूर्तिपूजा श्रुतिस्मृति उपनिषद् और पुराण वाक्यों से उत्तम ढंग पर सिद्ध की गई है । आरम्भ तो ऐसे ढंग से किया है कि मालूम होता है मूर्तिपूजा की जड़ ग्रन्थकर्ता उखाड़ दिया चाहते हैं । किन्तु धीरे २ अन्त में खण्डन की वेही सब युक्तियां मूर्तिपूजा मण्डन की सहकारी हो गयीं हैं-बम्बई निर्णय सागर प्रस में यह पुस्तक छापी गई है ॥

संपादकीय मन्तव्य ।

अन्योन्य जल कल्लोलवाली दोनदियों के संगम सदृश धर्म महा मण्डल और महाराज दरभंगा इस दो महा का संगम समझदारों को एक अद्भुत अन्योन्याश्रय की बहार दिखला रहा है । पाणिनिव्याकरण में अन्योन्याश्रय एक दोष मान सिद्ध कर दिया गया है कि अन्योन्याश्रय दोष वाले कार्य सफल नहीं होते । इस परस्पर संगम के अन्योन्याश्रय से भी कुछ ऐसाही पाया जाता है कि आगे चल इस मे सफलता हो वा न हो सन्दिग्ध है । क्योंकि दोनों को स्वार्थ बुद्धि दबाये है और दोनों अपनी २ घात में लगे हैं । महा मण्डल ने यह समझ लिया है कि बड़े भारी श्रीमन्त महाराज को अपनी मूठी में कर

लिया अब मण्डल की ताक़त का पार पाना दुशवार है। उधर महाराजा दर्भंगा अलग ही अपनी घात में हैं कि हम ऐसी भारी जमात के प्रेसिडेंट हैं तो गवर्नमेंट की नज़र में हमारा भारी भरखं होना बहुत ही बहुत बढ़ गया। किन्तु यहां के कुम्भ मेले में मण्डल के कई एक अधिवेशन से इसका सब भीतरी हाल खुल गया। हम अपने पिछले एक नम्बर मे लिख चुके हैं कि धर्म पर ऊपरी देखावट का आवरण आवश्यक है। वह मण्डल के यहां पर उन अधिवेशनो से स्पष्ट हो गया। गतानुगतिक अन्ध परंपरा मे मण्डल की चाहो जो कदर और प्रतिष्ठा हो पढ़े लिखे लोगों को तो इस की ओर से खटक होगई। हम आरंभ ही से सोशल कानफरेन्स और महामण्डल दोनों का प्रतिवाद करते आये हैं। कानफेरेंस का इस लिये कि यह कपट कापटिकों का अखाड़ा है और मण्डल को इस लिये कि यह स्वार्थ में चतुर लोगों का वितान है॥

कलवार गज़ट ने जाति शीर्षक एक लेख से हम कौन हैं इस का भरपूर परिचय दे दिया। उच्च जाति खास कर ब्राह्मण पर न जानिये कब के जमे हुये बुखार का सहसा उद्गार इस ने कर डाला। इस में सन्देह नहीं अमेरिका आदि देशों में ऊंच नीच बड़े वा छोटे के भेद का उठ जाना ही तरक्की का बाइस हुआ किन्तु जाति का क्रम उठ जाने से भारत में क्या भयंकर परिणाम होगा सो न सोच अपनी राय जो मन में आया लेखक महाशय गा गये हैं। हम सब चेष्टा अपनी तरक्की की करते रहैं पर एक दूसरी जाति मुसल्मान जिन से हमारा दामन चोली का अन्तर है हमे कभी न उठने देंगे-जब तक इन मे का एक भी शेष रहेगा विघ्न डालने से न चूकेगा। बिलाई कीसी खासीयत इन में देखी जाती है बिल्ली जब दूध नहीं पीने पाती तो ढरका देती है। बरोदा के गाइकवार की तो यह भी राय है कि हिन्दू मुसल्मान मे "इन्टर मेरियेज" विवाह शादी प्रचलित हो जाय पर गइकवार का यह मन्तव्य उन्ही की गांठ मे बंधा रहे काम

मे न लाया जाय तो इसी में हमारी भलाई है। हमे तो वही क्रम ठीक मालूम होता है जो जल वायु तथा प्राकृतिक घटनाओं को खूब परख पहले के ऋषियों ने चला दिया है-इस समय उस क्रम पर हमारे यहां जाति नहीं है इस से अनेक दोष उठ खड़े हुये हैं। Purity of blood रजवीर्य की शुद्धता को हम अधिक मानते हैं जाति कायम रहने से उस नसल में फरक नहीं आ सक्ता। ब्राह्मण जाति के साथ लेखक का इतना मत्सर प्रगट किये देता है कि इन्हे कहां तक अपनी योग्यता का घमंड है तथा चित्त में कितना संकीर्ण भाव है। इस गिरे ज़माने में जब ब्राह्मण इस कदर रद्दी हो गये तौ भी देश के उद्धार का काम सब से अधिक वेही कर गये और कर रहे हैं जो जाति के ब्राह्मण हैं। आशा करते हैं आग से कलवार गज़ट सावधान हो जायगा ऐसी ऊट पटांग तान न छेड़ बैठेगा और हमे माफ भी करेगा॥

गतांक में राघवेन्द्र ने मालवीय महोदय का चित्र दे अपना दुर्बल चित्त हमलोगों को चिन्हाय दिया। इस चीन्ह पहचान के उपरान्त यह मालूम हो गया कि सम्पादक को चलता पुरज़ा हो जाने की कहां तक ख्वाहिश है और उस ख्वाहिश की कितनी सीमा है। ऐसा मनुष्य जो निः स्वार्थ देश भलाई में तत्पर है और उस से लाभ उठाना कैसा बरन बड़ा नुकसान सह रहा है उसे ऐसी दक्षिणा देना राघवेन्द्र ही से बन पड़े-राघवेन्द्र सम्पादक बड़े लोग हैं बड़ों को सब सोहता है॥

सेना विभाग में प्रति वर्ष कई करोड़ का खर्च बढ़ जाने के प्रतिवाद में गोखले महाशय ने अपनी कौन्सिल की स्पीच में जो कुछ कहा उसका खण्डन पायोनियर अपने ढंग पर करता हुआ गोखले से चिढ़ उठा है। क्या पायोनियर यही चाहता है कि हमें जो आघात पहुंचे उसे मुह से कहैं भी नहीं? यह तो निश्चय है कि पायोनियर हमलोगों की भलाई क्यों चाहेगा? किन्तु बुराई हिन्दुस्तान की कहां तक हो इस की भी तो कुछ हद्द हो जानी चाहिये॥

सरस्वती और भारतमित्र ये दो वीर केशरी इनदिनो बेतरह लड़ रहे हैं और दोनों अपनी २ लेख शक्ति का इमतिहान देते हुये लेखक की कोई डिगरी हासिल करने के उद्योग मे लगे हैं देखें इस में कौन अन्त तक पास होता है और कौन फेल ॥

दृढ़ और पवित्र मन।

मन की तुलना मुकुर के साथ दी जाती है जो बहुत ही उपयुक्त है। मुकुर में तुम्हारा मुख साफ तभी देख पड़ेगा जब दर्पण निर्मल है। वैसा ही मन भी जब किसी तरह के विकार से रहित और निर्मल है तभी मनन जो उस का व्यापार है भली भांत बन पड़ता है। तनिक भी बाहर की चिन्ता या कपट तथा कुटिलाई की मैल मन पर संक्रामित रहे तो उस के दो चित्त हो जाने से सूक्ष्म विचारों की स्फूर्ति चली जाती है। इसी से पहिले के लोग मन पवित्र रखने को बन में जा बसते थे-प्रातःकाल और सांझ को कहीं एकान्त स्थल में स्वच्छ जलाशय के समीप बैठ मन को एकाग्र करने का अभ्यास डालते थे। मन की तारीफ में यजुर्वेद संहिता की ३४ अध्याय में ५ ऋचायें हैं जो ऐसे ही मन के सम्बन्ध में हैं जो अकलुषित स्वच्छ और पवित्र हैं। जल की स्वच्छता के बारे में एक जगह कहा भी है "स्वच्छं सज्जनचित्तवत्" यह पानी ऐसा स्वच्छ है जैसा सज्जन का मन-अस्तु उन ५ ऋचाओं में दो एक को हम यहां अनुवाद सहित उद्धृत कर अपने पढ़ने वालों को यह दिखाया चाहते हैं कि वैदिक समय के ऋषिमुनि मन की फिलासोफी को कहां तक परिष्कृत किये थे।

"यस्मिन्नृचः सामयजूंषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता
रथनाभाविवाराः-यस्मिंश्चित्तं सर्वमोतं
प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीषु-

भिर्वाजिन इव-हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं
तन्मे मनः शिवसकल्पमस्तु" ॥

रथ की पहिया में जैसा आरा सन्निविष्ट रहते हैं वैसाही ऋग् यजु साम के शब्द समूह मन में सन्निविष्ट हैं। पट में तन्तु समूह भी ।। ओत प्रोत रहते हैं वैसा ही सब पदार्थों का ज्ञान मन में ओत प्रोत है। अर्थात् मन जब अकलुषित और स्वस्थ है तभी विविध ज्ञान उस मे उत्पन्न होते हैं व्यग्र हो जाने पर नहीं। जैसा चतुर सारथी घोड़ों को अपने आधीन रखता है और लगाम के द्वारा उन को अच्छे रास्ते पर ले चलता है वैसा ही मन हमें चलाता है। तात्पर्य्य यह कि मन देह रथ का सारथी है और इन्द्रियां घोड़े हैं-चतुर सारथी हुआ तो घोड़े जब कुपन्थ पर जाने लगते हैं तब लगाम कड़ी कर उन्हें रोक लेता है। जब देखता है रास्ता साफ है तो बाग डोर ढीली कर देता है वैसा ही मन करताहै। जिस मन की स्थिति अन्तःकरण में है जो कभी बुढ़ाता नहीं जो अत्यन्त वेग गामी है वह मेरा मन शान्त व्यापार वाला हो ॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य
तथैवैति। दूरं गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

चक्षु आदि इन्द्रियां इतना दूर नहीं जातीं जितना जागते हुये का मन दूर से दूर जाता है और लौट भी आता है। जो दैव अर्थात् दिव्य ज्ञान वाला है। आध्यात्मिक सम्बन्धी सूक्ष्म से सूक्ष्म विचार जिस मन मे आसानी से आ सक्ते हैं। प्रगाढ़ निद्रा की सुषुप्ति अवस्था में जिस का सर्वथा नाश हो जाता है जागते ही जो तत्क्षण फिर जी उठता है। वह मेरा मन शिव संकल्प वाला हो अर्थात् सादा उस में धर्म ही स्थान पावे पाप मन से दूर रहे।

मन की बराबर चंचल संसार में कुछ नहीं है। पतञ्जलि

महामुनि ने उसी चंचलता को रोक मन के एकाग्र रखने को योग दर्शन निकाला। यूरोप वाले हमारी और २ विद्याओं को तो खोच ले गये पर इस योग दर्शन और फलित ज्योतिष पर उन की दृष्टि नहीं गई सो कदाचित् इसी लिये कि ये दोनो आधुनिक सभ्यता के साथ जोड़ नहीं खाते। इस तरह के निर्मल मन वाले सदा पूजनीय हैं। जिन के मन में किसी तरह का कल्मष नहीं है द्रोह ईर्ष्या मत्सर लालच तथा काम वासना से मुक्त जिन का मन है उन्ही को जीवन्मुक्त कहेंगे।

बुद्ध और ईसा आदि महात्मा दत्तात्रेय और याज्ञ वल्क्य आदि योगी जो यहां तक पूजनीय हुये कि अवतार मान लिये गये उन में जो कुछ महत्व था सो इसी का कि वे मन को अपने वश में किये थे। जो मन के पवित्र और दृढ़ हैं वे क्या नहीं कर सक्ते संकल्प सिद्धि इसी मन की दृढ़ता का फल है। शत्रु ने चारो ओर से आके घेर लिया;लड़ने वाले फौज के सिपाहियों के हाथ पांव फूल गये भाग के भी नहीं बच सक्ते, सबों की हिम्मत छूट गई, सब एक स्वर से चिल्ला रहे हैं हार मान अब yield शत्रु के सिपुर्द अपने को कर देने ही मे कल्याण है; कैदी हो जांयगे बला से जान तो बची रहेगी। पर सेनाध्यक्ष Commander अपने संकल्प का दृढ़ है सिपाहियों के रोने गाने और कहने सुनने से विचलित नहीं होता; कायरों को सूरमा बनाता हुआ रण भूमि में आ उतरा; तोप के गोलों का आघात सहता हुआ शत्रु की सेना पर जा टूटा ; द्वन्द्व युद्ध कर अन्त को विजयी होता है। ऐसा ही योगी को जब उस का योग सिद्ध होने पर आता है तो विघ्न रूप जिन्हें अभियोग कहते हैं होने लगते हैं इन्द्रियों को चलाय मान करने वाले यावत् प्रलोभन सब उसे आ घेरते हैं। उन प्रलोभनो में फस गया योग से भ्रष्ट हो गया। अनेक प्रलोभन पर भी चलायमान् न हुआ दृढ़ बना रहा तो अणिमा आदि आठो सिद्धियां उसकी गुलाम बन जाती हैं योगी सिद्ध हो जाता है। ऐसाही विद्यार्थी जो मन और चरित्र का पवित्र है दृढ़ता के साथ पढ़ने में लगा रहता है पर बुद्धि का

तीक्ष्ण नहीं है; बार २ फेल होता है तौभी ऊब कर अध्ययन से मुह नहीं मोड़ता; अन्त को कृतकार्य हो संसार में नाम पाता है। बड़ी सी बड़ी कठिनाई में पड़ा हुआ मन का पवित्र और दृढ़ है तो उस की मुशकिल आसान होते देर नहीं लगती। आदमी में मन की पवित्रता छिपाये नहीं छिपती न कुटिल और कलुषित मन वाला छिप सक्ता है। ऐसा मनुष्य जितनाही ऊपरी दांव पेंच अपनी कुटिलाई छिपाने को करता है उतनाही बुद्धिमान् लोग जो ताड़बाज़ हैं ताड़ लेते हैं। कहावत है "मन से मन को राहत है" "मन मन को पहचान लेता है"। पहली कहावत के यह माने समझे जाते हैं कि जो तुह्मारे मन में मैल नहीं है वरन तुम बड़े सीधे और सरल चित्त हो तो दूसरा कैसा ही कुटिल और कपटी है तुम्हारा और उस का किसी एक खास बात में संयोग वश साथ हो गया तो तुह्मारे मन को राहत न पहुंचेगी। जब तक तुम्हारा ही सा एक दूसरा उस में पड़ तुह्में निश्चय न करादे कि इसका विश्वास करो हम इस के बिचवई होते हैं। दूसरी कहावत के मतलब हुये कि हम से कुटिल और चाल बाज़ का हमारे ही समान कपटी चालाक का साथ होने से पूरा जोड़ बैठ जाता है।

मस्तिष्क, मन, चित्त, हृदय, अन्तःकरण, बुद्धि ये सब मन के पर्याय शब्द हैं दार्शनिकों ने बहुत ही थोड़ा अन्तर इन के जुदे २ Functions कामों में माना है-अस्तु हमारे जन्म की सफलता इसी में है कि हमारा मन सब बक्रता और कुटिलाई छोड़ सरल वृत्ति धारण कर; भगवद्चरणारविन्द के रसपान का लोलुप मधुप बन; अपने असार जीवन को इस संसार में सारवान् बनावे; और तत्सेवानुरक्त महज्जनो की चरण रज को सदा अपने माथे पर चढ़ाता हुआ ऐहिक तथा आमुष्मिक अनन्त सुख का भोक्ता हो; जो निश्चितमेव नाल्पस्यतपसः'फलम् है। अन्त को फिर भी हम एक बार अपने वाचकवृन्दों को चिताते हैं कि जो तभी होगा जब चित्त

मतवाला हाथी सा संयम के खूटे से जकड़ कर बांधा जाय। अच्छा कहा है ॥

अप्यस्ति कश्चिल्लोकेऽस्मिन्येनचित्तमदद्विपः।
नीतः प्रशमशीलेन संयमालानलीनताम् ॥

सुलभ कार्य।

एक दिन हमारे एक आत्मज्ञानी मित्र ने जो आज कल एक ब्रह्म की दृष्टि से संसार को देखने वालों में अग्रणी बनने का दावा कर रहे हैं, हम से पूछा कि वह सहज कर्म कौन सा है जो श्रीकृष्ण भगवान् ने अर्जुन से गीता के अठारहवें अध्याय में कहा है कि "सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्" उन्हों ने यह भी कहा कि अठारह अध्याय गीता का सार इतना ही है इसी में सब करामात है। जो इसको जानता है वही गीता के गूढ़ तत्त्व को समझता है। यह सुन थोड़ी देर तो हम योंही विचारते रहे पश्चात् निज क्षुद्र बुद्धि के अनुसार उत्तर दिया। उस उत्तर से मित्र महाशय का मन न भरा तब हमने दूसरी बात सोच कर कहा। उस से भी उन्हें सन्तोष न हुआ। फिर तीसरी चौथीबार। ऐसे ही कई बार कई तरह से अपनी समझ से उत्तर दिये। मानो हमने अपने ज्ञान की पूंजी सब खोल कर बता दी; तौभी उनको सन्तोष न आया। तब हमने विनती पूर्वक निवेदन किया कि महाराज, आपही बतलावें कि वह सहज कर्म कौन सा है। हम ने बहुत२ गिड़ गिड़ा कर पूछा पर कोई फल न हुआ। मित्र महाशय पूरे मित्र निकले आखिर में बहुत नाक रगड़ने पर एक कुटिल हास्य के साथ यह कह चुप हो गये कि भाई, इसका जानना बहुत कठिन है। ऐसी बातें सत्संगति से प्राप्त होती हैं। हम अब तक मित्र जी को सत्संगति का द्वार समझते थे पर उनकी माया देख मन ही

मन अति खिन्न हुए और अपना सा मुंह ले चले आये। चले तो आये किन्तु उस हास्य का प्रभाव न गया। दिन प्रति दिन यह जानने की लालसा बढ़ती गई कि वह सहज कर्म क्या है। टीकाकारों का आशय हम पहिले बतला चुके थे अतः उसे फिर देखने की इच्छा न हुई। अब हम इस की टोह में लगे। जो कोई जानकार मिलते, जहां २ सत् संगति होती इस की चर्चा छेड़ देते परन्तु किसी से इस की मन भावनी मीमांसा न हो सकी। ईश्वर को कोटानुकोटि धन्यवाद है कि आज हमारी वह इच्छा, वह गाढ़ी लालसा पूरी हुई और दिन रात का परिश्रम सफल हुआ। दुःख ग्लानि सब मिटे। इस सहज कर्म की जिज्ञासा सब को रहती है यह सोच हमने इस के प्रकाश कर दिखाने का साहस किया है। मित्र जी ने तो बतलाया नहीं, परन्तु हमने निज अन्वेषणी बुद्धि से इसे प्राप्त किया है। स्वार्जित द्रव्य में वा नई आविष्कृत बात में कृपण जन को लोभ होता है लेकिन हम इस लोभ के फन्दे में नहीं आते। "प्रदीप" के पाठक ज़रा ध्यान देकर पढ़ें। सहज कर्म वह वस्तु है जिस के साथ ये आठगुण निरंतर निवास करते हैं। उस के आते ही आठो गुणों की माला आप से आप कण्ठ देश को सुशोभित कर देती है। उन में प्रथम गुण निश्चिन्तता है। चाहे घर उजरे चाहे बसे। देश चाहे आज ही नरक कुण्ड हो जाय चाहे स्वर्ग भूमि की शोभा धारण कर ले। खाने के मिले चाहो न मिले। जड़ पत्थर के समान चुप चाप बैठे रहना, बस। दूसरा गुण है बहु भोजन प्रियता। यद्यपि विना चिन्ता के कुछ मिलेगा नहीं और मिला भी तो मन माफिक न होने से गले के नीचे उतरेगा नहीं तथापि भाग्य पर भरोसा किये हाथ पांव न हिलाना और इतना खाना कि देखने वाला घबड़ा कर भाग जाय। तीसरा गुण है अति मुखरता अर्थात् खूब गालबजाना यह पण्डित बनने का पूरा साधन है "पाण्डित्ये चापलं वचः"। चौथा गुण रात्रि दिन २४ घंटे स्वप्न देखना। यह गुण सिवाय जितेन्द्रिय तपस्वी के

और किसी को मिलने का सौभाग्य नहीं होता। इसी गुण के कारण श्रीकृष्ण जी गुडाकेश कहलाते थे। ५ वां गुण-कार्य और अकार्य में अन्धे और बहिरे के समान विचारवान् कहलाना। अर्थात् जो कार्य कर्त्तव्य वश किया जावे उसमें अन्धा बनकर प्रवृत्त होना और जो दुष्कार्य है उसे बहिरा बन किसी के सिखापन को न सुन करने लग जाना। यह एक उत्कृष्ट गुण है। इस से आत्म निर्भरता का परम पूजनीय गुण बिना यत्न ही आता है। छठा गुण मान अपमान को एक सा जानना। यह गुण प्राप्त होने से वेदान्त का तत्व जानने की आवश्यकता कभी नहीं पड़ती। गोया इस से संसार मुट्ठी में आ जाता है। ७ वां गुण है रोगी बना रहना। जिसके पूर्वले के कर्म ज़बरदस्त होते हैं वही आदमी रोगी बन पलङ्ग पर पड़े घरवालों से अपनी सेवा कराता है। रोगी होना तात्विक दृष्टि से देखो तो भोगी बनने का एक मात्र लक्षण है। आठवां गुण दृढ़ बपु अर्थात् संड मुस्संड बने रह कर अजगरी वृत्ति धर लेना और दूसरे की कमाई पर चैन उड़ाना। अब कहिये ये गुण कैसे उच्च कोटि के हैं। ये जिस महा पुरुष में हों उस के सुख में कोई कसर नहीं रहती। पुरुषार्थ चतुष्टय उसी को प्राप्त होते हैं। लोक और परलोक दोनों उसके दिव्य हो जाते हैं। तिस पर परमलाभ यह है कि ये गुण बहुत सहज हैं। अनायास मिलते हैं। इन के लिये श्रम की आवश्यकता बिलकुल नहीं रहती। इन गुणो की जनक जननी दोनो एक है वही मूर्खता जो हमारे प्राणों से प्यारी है। बस, सुखी होने का सहज साधन यही है। जिस को यह लटका प्राप्त करना हो वह देर न करे। हमारी नहीं तो एक अनुभवी कवि की उक्ति पर विश्वास किये रहे अवश्य सुख प्राप्त होगा। वह उक्ति यहां हम ज्यों की त्यों लिखे देते हैं। हो सके तो हर एक आदमी इसे कंठ कर लें और पूर्वोक्त बातों से मिला कर अर्थ भी समझ लें। समझ जाने पर इस की सत्यता की प्रशंसा वह आप करेगा। वह उक्ति यह है :-

मूर्खस्त्वं सुलभं भजस्व कुमते मूर्खस्य चाष्टौगुणा निश्चिन्तो वहु भोजनोऽतिमुखरो रात्रिं दिवा स्वप्नभाक्। कार्याकार्य विचारणान्धवधिरो मानापमाने समः प्रायेणामयवर्जितो दृढ़ वपु मूर्खः सुखं जीवति॥

यथार्थ में इस से बढ़कर सुलभ और सुखदायक कार्य कोई नहीं है। इस को पाकर हम अपनी लालसा ही पूरी नहीं कर सके प्रत्युत ऐसे सुखी हुए जैसे पाणिनि महाराज अरुण शिखा की धुनि के द्वारा ह्रस्व दीर्घ और प्लुत का भेद प्रगट करके और न्यूटन साहिब आम्रफल पतन विधि से गुरुत्वाकर्षण का नियम खोज कर प्रसन्न हुए थे॥

अनन्त राम पांड़े—रायगढ़

राम—विनय।

अहो राम सुधि अब लागी तब-लग्यो जबै दुख; आन।
सुख सम्पदा सूर्य जब हीं दुख; अन्धकार महं छान॥
जब लगि रहयो बाहुबल अपनो, रहयो पास महं दाम।
रही देश महं स्वतन्त्रता जब; रहयो अनेक अराम॥
विद्या रही और चतुराई; रहयो जगत सन्मान।
रहे अनेकन मित्रादिक जब; रहयो पास धन धान॥
रही स्वदेश-वस्तु घर २ में; रही न फूट कराल।
रही न कुमति कहूं जग स्वामी; रही सुमति सुविशाल॥
रहयो वर्न जब चार और जब, रहयो लोक आचार।
रहयो 'सत्य' कछु मन्त्र जबै अरु, तन्त्र रहयो सुविचार॥

रह्यो धरम अरु करम रह्यो जब, रह्यो नियम जपजोग ।
रह्यो विराग तपादिक जबहीं, रहे सुपथ सब लोग ॥
रह्यो सनातन धरम देश, अरु भेष रह्यो परमान ।
रही देश भाषा उन्नति जब, नृपगन रहे सुजान ॥
रह्यो न सिग्रेट वाइन ह्विस्की, ब्राण्डी बोतल लाल ।
रह्यो न एकाकार जनों में, अत्याचार कराल ॥
रही न रोटी डब्बल बिसकुट, मटन बीफ को राज ।
रही न जग में नई सभ्यता, रह्यो न 'ब्रह्म समाज' ॥
रह्यो न आई. सी. एस एको-बूट हैट औ कोट ।
रही न कालर नेकटाई कहुं-रह्यो न ओवर कोट ॥
रही न नारिन की स्वतन्त्रता-सभ्य देश की चाल ।
रह्यो न ब्राह्मण रेभरेण्ड जब-रह्यो न होटल हाल ॥
रही न इतनी चिन्ता भारी-पेट भरन के काज ।
रही न जग में निर्लज्जा की-इतनी बड़ी समाज ॥
रह्यो न खंड खंड पाखण्डहुं-अरु अखण्ड नहिं पाप ।
रह्यो नाहि विधवा बिवाह अरु बाल बिवाहिक ताप ॥
रह्यो बेद जब घर २ नाहीं-ब्राह्मण नहि सब जात ।
रह्यो नाहिं विज्ञान ज्ञान-औ वर्तमान की बात ॥
रहे न जात थियेटर देखन-गुरूशिष्य इक साथ ।
रह्यो मात पित सेवक जबही-पुत्र गुणी, हे नाथ ॥
रह्यो पतिव्रत में नारिन जब-नर पत्निव्रत माहिं ।
रह्यो प्रेम भाई भाइन महं-घरन लड़ाई नाहिं ॥
रह्यो नाहिं यह प्लेग तबै जग-राकस सम बिकराल ।
रह्यो नाहिं रोगादिक एकौ, अवर्षणादि अकाल ॥
जब लगि रह्यो अनन्द चहूं दिसि, धरो न तुम्हरो ध्यान ।
अब जब घेरन लगे घोर दुःख-तब तव करते गान ॥

स्वार्थी यहि विधि अहैं प्रभो हम; लिप्त स्वार्थ के साथ।
मुख महं एको बार न सुमिरो; नाम तुम्हारो नाथ॥
अब दुख परे गोहारत तुमही-कृपा सिन्धु रघुनाथ!
डूबत हा अगाध जल माहीं, नाथ, गहो अब हाथ॥
बेगि उबारहु दुख सागर तें-दीन बन्धु हे राम!
तुम्हरे रहत दशा इमि हमरी-तो प्रभु कहं बदनाम॥
सूरज रहत जगत में चहुं दिसि-छयो जबै अन्धियार।
तो देवैं केहि दोष कहो प्रभु! हा! ह! दुःख अपार॥
तदपि धैर्य रखि करत विनय इमि, है कछु नहि मम पास।
केवल रटत निरन्तर तेरो, नाम राम! सुख आस॥
यद्यपि नसो हमारो सिगरो, जन मन धन बल धाम।
किन्तु भरोसो तदपि प्रभो यहि "निर्धन के धन राम"॥

लोचन प्रसाद पांडे-रायगढ़

आत्म श्लाघा।

संसार में ऐसे पुरुष बहुत हैं जो अपनी तारीफ़ सुन बड़े प्रसन्न हो कुप्पा सा फूल उठते हैं। वह उन की प्रशंसा योग्य है या अयोग्य; किन्तु वे इसे कभी ध्यान में नहीं लाते कि हम इस तारीफ़ के लायक हैं या नहीं। प्रशंसा लोभी यह भी नहीं सोचते कि हमने ऐसा कोई काम किया है; या तारीफ़ करने वाले हमे खुश कर अपना काम किसी तरह हम से निकाला चाहते हैं। सच तो यों है कि ऐसा कोई विरला पुरुष सिंह मिलैगा जो आत्मश्लाघा की वासना सर्वथा चित्त में न रख सर्वोपकारी किसी काम को कर गुज़रा हो। जगत् में हमारी कीर्त्ति फैलैगी यह सोच लोग रणभूमि में सिर कटाय जूझ जाते हैं और पीछे पांव नहीं देते। ऐसे ही पुरुष रत्नों से यह क्षितितल मण्डित हो कभी २ जगभगा उठता है और ऐसेही लोग वास्तव में प्रशंसा भाजन हैं।

ऐसों की जितनी स्तुति गाई जाय थोड़ी है। इस तरह के दिगन्त व्यापी यश वाले इस समय गोखले सुरेन्द्र नाथ बनर्जी इन प्रान्तों में मालवीय महोदय हैं। जो सर्वतोभावेन देशोपकार और देश के उद्धार में सन्नद्ध हैं। इन श्रेष्ठ पुरुषों को निरी आत्मश्लाघा की बासना नहीं है बरन गोधूम वास्तुक सिंचन न्याय का अनुसरण है। जैसा उद्देश्य गेहूं के सींचने का रहता है साथ ही बथुआ भी सिच जाता है। लक्ष्य देश के उपकार का है प्रशंसा एक आनुषंगिक फल मिलता रहे तो इसका कोई हर्ष भी नहीं। हमे तो ऐसा ही मालूम होता है कि केवल आत्म-श्लाघा के खयाल से ये लोग यह काम कर रहे हों सो नहीं बरन अपना कर्त्तव्य समझ प्रवृत्त हैं। ऐसों की संख्या हमारे यहां अभी बहुत कम है। ऐसे२ पुण्य पुंज यहां अधिक होते तो यह भिखारी देश क्यों रसातल को धंसा जाता और आर्त दशा में पड़ दासत्व की श्रृङ्खला से जकड़ा रहता। पुरुष रत्न तो यहां दुर्लभ हैं पर ऐसे पुरुषाधमो के बोझ से हिन्दु-स्तान की धरती अलबत्ता दबी जा रही है जो झूठी तारीफ़ के रसिक हैं। आत्मश्लाघा वाले कभी २ अपने मुंह से अपनी प्रशंसा करने लगते हैं। और उस अपनी तारीफ़ के जोश के सामने यदि किसी दूसरे की स्तुति की गई तो उसे काटने लगते हैं। इतनाहीं नहीं वल्कि उस तारीफ़ करने वाले को और जिस की तारीफ़ की जाती है दोनो को डाह और हसद की नज़र से देखते हैं। ऐसे कलुषित चित्त वालों की गणना खलों में की जाती है। सच पूछो तो खलता की यह सब से बड़ी पहचान है; नैषध में नल की प्रशंसा के प्रसंग में श्रीहर्ष ने खल की पहचान इस तरह पर कहा है॥

"वग्जाल वैफल्यमसह्यशल्यं गुणाधिके वस्तुनि मौनिता चेत् । खलत्वमल्पीयसि जल्पितेपि तदस्तुवन्दिभ्रम भूमितैव"

गुण में अधिक की यथोचित स्तुति न करना मानो बोलने की शक्ति रखने वाली जिह्वा की कल्पना ही मुख में व्यर्थ की गई है और चित्त को एक ऐसी चोट है जो सही नहीं जा सक्ती। जितना गुण उस व्यक्ति गत है उस्से घटा के कहना खलता है जिस से यह सर्वथा प्रगट है कि हमको उसके गुण पर डाह और ईर्ष्या है तब तो पूरी गुण स्तुति उसकी नहीं करते। अतएव हम उस गुणाधिक की प्रशंसा बार २ निरन्तर करते ही रहेंगे आप हमें भाट और वन्दियों में गिन लें हमें इस की कुछ परवाह नहीं। तुलसी दास ने भी ऐसाही कहा है—

तुलसी निज कीरति चहैं पर की कीरति खोय।
तिनके मुख मसि लागि है मिटै न मरि हैं धोय॥

इस तरह के आत्मश्लाघा लोलुपों से सभा या सोसाइटी को बहुधा बहुत हानि पहुंचती है। जिस समूह में एक भी ऐसा आदमी है और कुछ इखतियार या प्रभुत्व वाला हुआ तो अपनी डफली अपना राग वाली कहावत सुघटित होती है। बात २ में वह अपनी ही तारीफ़ की तान छेड़ने लगता है। खुदग़र्ज़ी और निज स्वार्थ उस के नस २ में व्यापा है प्रभुता उसे प्राप्त हुई है तब क्या कहना एक तो लौकी तीती दूजे चढ़ी नीम। शामत का मारा खुशामद का दुश्मन हमसा स्पष्ट वक्ता कोई वहां बैठा था झूठी हिमाकत बरदाश्त न कर सका टोक बैठा। बाबू साहब आग बबूला हो गये जामे के बाहर हो विजली सा कड़क उठे। खुशामदी सदा उनकी नाज़ बरदारी करते आये ऐसा मौका आया ही नहीं कि कोई हुज़ूर की बात को दुलख देता। उसी दिन से नइत्तिफाकी का बीज बो गया दो पार्टी हो गई जो बाबू साहब के खुशामदी और उन से दबे थे जुदा हो अपनी मीटिङ्ग अलग करने लगे। यही कारण है कि क्लब या कमेटी यहां बहुत दिन तक नहीं कायम रहती। साल में न जानिये कितनी सभायें 'स्थापित

हुआ करती हैं थोड़े दिन रह टूट जाया करती हैं। इस आत्मश्लाघा के साथ स्वार्थ अवश्य मिला रहता है स्वार्थ तत्परों का समूह कब बंधा रह सका है।

"सर्वे यत्र विनेतारः सर्वे पण्डितमानिनः।
सर्वे महत्वमिच्छन्ति तत् वृन्दमवसीदति" ॥

शंकर प्रसाद मिश्र-रायपूर

बाबू सुरेन्द्र नाथ पर जुर्वाना।

पूर्वी बंगाल के नये लाट फुलर साहब कहां तक अपने मन की करते जांयगे? क्या सच २ ऊंचे कर्मचारियों को अपने मन की कर डालने की रोक के लिये कोई कानून नहीं है? क्या लार्ड मिंटो निरे गुड़वा बना के गवर्नर जेनरली के पद पर भेजे गये हैं? तब क्यों ऐसे २ अत्याचारों की कोई नोटिस नहीं लेते? या भीतर २ उनकी संमति ऐसे २ कामों के लिये है? हम लोग तो यही समझे थे कि शान्ति प्रिय लार्ड मिंटो ऐसा शासन करेंगे कि लार्ड कर्ज़न जो प्रजा में उद्वेग और हलचल फैलाय गये हैं इस की जड़ कट जायगी; सुख और चैन प्रति दिन बढ़ता जायगा; काले और गोरे में विषम भाव का कहीं अंकुर भी न रह जायगा। वन्दे मातरम् का बन्द कर देना फिर यह जुर्वाना क्या अत्याचार नहीं समझा गया? हमे सोच है अभी तो फुलर साहब को वहां ५ वर्ष काटना है इस ५ वर्ष में वहां वालों को क्या २ दुर्गति सहना पड़ेगा। अस्तु फुलर साहब बंगालियों से चिढ़े हैं उन्हें दबाने को सब कुछ कर सक्ते हैं। पर हम देखते हैं तो यही नीति सब जगह प्रचलित है कि अहल बिलाइती के मुकाबिले हिन्दुस्तानी ही दबाये जाते हैं और नुकसान सहते हैं। जहां कहीं कोई हिन्दुस्तानी दरजे बदरजे तरक्की पाते ऊंचे दरजे पर पहुंच गया है तो उसके पेन्शन ले लेने पर उस जगह पर अंगरेज़ नया आदमी जिस का कोई हक्क उस

पद पर आने का नहीं है किया जाता है। दो सौ के ऊपर की नौकरी पर बहुधा हिन्दुस्तानी नहीं किये जाते। कहीं पर कोई होते भी हैं तो वेही जो कर्मचारियों की हां में हां करना खूब जानते हों; नौकरी करते २ जिनमें कौमी जोश कहीं नाम को भी न बच रहा हो; और अपने लोगों की हानि कर सर्कार का अनेक फाइदा कर दिखाया हो। ऐसों के उच्च पद पर पहुंचने से हमें क्या लाभ? किन्तु हिन्दुस्तानी हैं इसलिये खुशी होती ही है। शिक्षा के प्रचार से ज्यों २ हमारे में अपने स्वत्व की पहचान और स्वदेश पर अनुराग बढ़ता जाता है त्यों २ शासन कर्ताओं में कड़ाई बढ़ती जाती है अन्त इसका देखैं क्या होनहार है। जो प्रजा को भला है वह राजा को प्यारा नहीं जो केवल राजा का भला चाहने वाला है उसे प्रजा क्यों चाहेगी। राजा प्रजा की इस खींचा खींची में सुरेन्द्र सरीखे देश हितैषी अपने ही देश का लाभ चाहते हैं और वह शासन की बागडोर हाथ में लिये हुओं को अप्रिय हैं; यही बड़ा दोष सुरेन्द्र बाबू में है उसी का दण्ड यह जुर्माना उन्हें देना पड़ा॥

——

एप्रिल फूल की बची खुची भूल।

एप्रिल फूल की खबर छप जाने बाद एक खबर जो हिं० प्र० आफिस के एक कोने में ६ महीने से छिपी पड़ी थी एक दिन अचानक दस्तयाब हो गई तो मुनासिब समझा गया कि उसे भी प्रकाश कर हम अपने पाठकों को कृत कृत्य करें॥

यह कौन नहीं जानता कि पहली एप्रिल बिलाइत में हमारे यहां की चैत बदी एकम् है और उस दिन जूते का बड़ा माहात्म्य बढ़ जाता है सो भी किसी से छिपा नहीं है। बस इसी खयाल से उसी के सम्बन्ध की एक टटकी खबर सुनाता हूं। हाल में बंगबासी के किसी अंक में प्रचलित जूतों के किस्मों की एक लिस्ट दी गई थी और इसी के बारे में एक लंबी चौड़ी गाथा गाई गई थी। फिर भी एक किस्म उसकी उस लिस्ट में न पाय हमें सन्देह हुआ कि क्यों सहयोगी उसे हज़म

कर गये । मुमकिन है वह किस्म उन को मिली न हो तो उचित जान पड़ा कि वह उन्हें बता दें । बन्दह परवर वह किस्म बिलाइत का चालान किया हुआ इटली और स्पेन का बना रोपसोल सुतली के तल्ले का जूता है । यूरोप के लोगों की अकिल सराहने लायक है कि इस तरह का फलाहारी जूता बनाय हिन्दुस्तान में सब मेल के आदमी पुराने क्रम के "आर्थोडाक्स" या नई रोशनी वाले दोनो का मतलब गांठा । पुराने क्रम वाले गङ्गा स्नान कर इसे पहने बराबर माला खटकाते हुये चल सक्ते हैं । हमारे नव युवक इसे पहिन टेनिस के खेल का मज़ा उठा सक्ते हैं । मालूम होता है स्वदेशी आन्दोलन के अगुआ बाबुओं का दांत इस पर नहीं लगा, खैर दांत लगावैं या न लगावैं; हिं० प्र० आफिस में एक ब्राह्मण ने देश हित साधन के खयाल से वर्ण व्यवस्था में अपनी अवनति कर ब्राह्मण से मोची बनना स्वीकार कर इसे बना बैनहूं स्पेन और इटली के बने रोपसोल में मिला दिया और उसकी मज़बूती तथा टिकाऊपन में तो भारत मित्र का यह कौल याद रखने लायक है "हिन्दुस्तानी जूत बड़ा मज़बूत लोग सबी बतलाते हैं । अंगरेज़ी बूटों से बढ़ कर खूबी उसमें पाते हैं" दाम थोड़ा काम चोखा ॥=) की बिसात ही क्या । हमारे स्वदेश भक्तों की इस पर कृपा दृष्टि होती तो इसकी ईजाद करने वाले का उत्साह चौगुना बढ़ता । मेशीन की तालाश हो रही है यदि कोई इसकी मेशीन हाथ लग गई तो सुबुक पन में भी यह स्पेन के रोपसोल से सबकत ले जायगा । अन्त में विनय है कि आप इस मेरे तूल किस्से को भूल से भी निरी एप्रिल फूल की कहानी न समझ लें नहीं तो यह मेरा ब्राह्मणी चूल का धूल में मिलाय अन्त्यज शूद्र बन जाना व्यर्थ हो जायगा । इसके लिये एक मेशीन दरकार है किसी को कहीं पता लगे तो मुझे इस पते से सूचित करें ॥

महादेव प्रसाद
हिन्दी प्रदीप इलाहाबाद

इस्से अधिक कष्ट का समय और क्या होगा ?

दस वर्ष के ऊपर होते आते हैं प्लेग ने जो कदम जमा रक्खा है उस से लाखों का संहार हो गया; बीच २ चेचक और हैज़ा अपना प्रकाश कर न जानिये कितनों को समेट लेता है, दो वर्ष से अकाल गला घोंट रहा है। पार साल माघ में जब अत्यन्त बर्फ पड़ा था जिस्से पकी पकाई खेती सब नष्ट हो गई उपरान्त बरसात ने भी धोखा दिया तब से आज तक गल्ला ही नहीं वरन यावत् पदार्थ सब हद्द से ज़ियादह महंगे हैं। साधारण आमदनी के गृहस्थों पर जैसी इस समय बीत रही है वह उनका जी जानता है। हम लोग सोच रहे थे सब बिपत्ति एक साथ ही नहीं आ गिरतीं अन्न का कष्ट झेल लेंगे प्लेग से तो छुटकारा मिला। बर्फ पड़ा है प्लेग के "जर्म" बीज नष्ट हो गये होंगे सो सब खयाली पुलाव हो गया प्लेग में वही तेज़ी बनी रही जैसी पहले थी। इतने पर अनेक तरह के टैक्स और चुङ्गी से नस २ का रस खिंचा जाता है विविध स्रोत के द्वारा अविच्छिन्न प्रवाह से धन यहां का बिलाइत ढोया चला जा रहा है। कुल आबादी का तीन हिस्सा कदाचित् एक जून आधा पेट खा कर रह जाता होगा। सब कष्ट सहा जाता है पर भूख का कष्ट नहीं सहा जाता। प्लेग आदि अनेक रोग दोख सब उसी भूखों मरने का प्रति फल है। कहावत है "मरता क्या न करता" भले २ लोग पेट की अगिन बुझाने को रूखा सूखा कदन्न जो मिला खाय किसी तरह प्राण रक्षा करते हैं और उस कदन्न भोजन का परिणाम महामारी आदि अनेक व्याधि में परिणत हो प्रजा का संक्षय किये डालता है। धिक् वह भी कोई जीवन है जब पेट भर अन्न खाने को न मिला। हिन्दू राजाओं के राजत्व में राजा यह अपना कर्तव्य समझता था कि अपनी सब तरह की हानि सह प्रजा का क्लेश दूर करे। कर्तव्य इसलिये था कि हिन्दू के शास्त्रों में इस बात पर बड़ा ज़ोर दिया गया है और सिद्ध किया है कि प्रजा

पर पीड़ा और क्लेश राजा का दोष है तो अपने दोष से मुक्त होने को राजा का फ़र्ज़ था कि अपनी यावत् हानि सह प्रजा को क्लेश से उद्धार करे। हमारे सामयिक राजा की शासन प्रणाली की पालिसी ऐसी बेढव है कि कुछ कहा नहीं जाता। हमारी वर्तमान् दीन दशा राज कर्मचारी न जानते हों सो नहीं है लाचारी कि देखते हुये भी नहीं देखते सुन कर भी अनसुनी कर देते हैं। वे भी क्या करें कुछ किया चाहें तो उस पालिसी के प्रतिकूल कर नहीं सक्के कुछ कर गुज़रें तो इन कर्मचारियों की हानि होती है और वह हानि गवर्नमेंट की हानि समझी जायगी। इसलिये कि गवर्नमेंट भी तो इन्ही कर्मचारियों का मजमूआ है। पुलिस का एक कानस्टेबिल से लेकर बड़े लाट तक सब गवर्नमेंट ही तो है। गवर्नमेंट क्या है इस उलझी गांठ का सुलझना कठिन काम है। यह वह पहेली नहीं है कि इस के माने कोई हल कर सके। छोटे जंट से या पुलिस के एक क्षुद्र कर्मचारी से लाट तक ऐसा आपस में गुथे हुये हैं कि एक दूसरे के विरुद्ध कभी कुछ करी नहीं सक्के। हिन्दुस्तान की चाहो जितनी हानि हो अपनी जाति और अपने देश की भलाई से न चूकैं गे। कोई सीधा सादा हाथी के दिखलाने वाले दांत पर दृढ़ न रह छटक कर निकल गया और क़ानूनो के असली मतलब पर झुक पड़ा तो उस बेचारे की कंबख्ती आई। हमेशा के लिये आगे को उसकी तरक्की बन्द की गई और कर्मचारियों में अंगुश्तनुमा हुआ। सामयिक शासन के ढंग से यही मालूम होता है कि हम लोग येन केन प्राण धारण किये रहैं और गाढ़ी मेहनत कर अपनी मेहनत का स्वल्प वेतन मात्र ले लिया करैं किन्तु उस परिश्रम का फल रूप जो कुछ सार पदार्थ हो उस से वंचित रहें। वह सब का सब सात समुद्र पार पहुंचता रहे "सर्वदेवनमस्कारं केशवं प्रतिगच्छतु" याद रहे कोई कौम सदा एक ही दशा में नहीं रही सूर्य के उदय अस्त के समान देश और जाति का भी उदय अस्त हुआ करता है। जब तक लोग अचेत

रहे किसी को कुछ नहीं मालूम होता था और न तब इतना सर्वग्रास था। राजा अपने शासन का हक्क मात्र ले लेता शेष धन यहां का यहीं रहता था देश सब ओर रंजा पुजा था लोग सब खुश हाल थे। अपने पुराने हिन्दू राजा तथा मुसल्मान बादशाहों को भूल चले थे। सब यथोचित और श्रृङ्खला बद्ध देख प्रकृत भी विकृत भाव न धारण कर आधि व्याधि से लोगों को मुक्त किये थी। अब राजकीय शासन में उचित के प्रतिकूल और विश्रृङ्खलता पाय प्रकृति भी प्रकुपित हो जल वायु तथा ऋतुओं का परिवर्तन आदि प्राकृतिक बातों को विश्रृङ्खल कर दिया जिसका परिणाम प्लेग और अकाल आदि भयंकर विपत्तियों में परिणत हो गया। माना कि हम इस समय विदेशी शासन के अधिकार में हैं स्वदेश शासन के सुख की आशा ही करना भूल है तो मुसल्मान भी तो विदेशी थे यहां बस जाने से स्वदेशी हो गये थे यहां का धन यहीं रहा दरिद्रता का दुःख न उठाना पड़ा और दोनो जातियों में सम भाव रहा। एक तो विदेशी शासन फिर धन बिलायत ढोया चला जाता है। इस सब के होते भी एक बड़ी त्रुटि यह है कि एक जाति दूसरी जाति का शासन कर रही है जो सब से अधिक अखर रहा है यावत् विषम भाव का मूल कारण है। अपढ़ों का तो नहीं कहते पढ़े लिखे सुशिक्षितों को यह अखर रहा है खास कर ऐसे मौकों पर जब गोरे और काले का एक बात में या एक स्थान में संघट्टन हो जाता है। ऐसे अवसर पर जित और जेता का अन्तर प्रगट करते गोरे महा पुरुषों की ऐंठ नहीं सही जाती न यह अपनी मान हानि सही जाती है धिक् हमारे जन्म को न जानिये हम लोगों ने कौन सा पाप कर रक्खा है जिस का यह फल हमें मिल रहा है। यदि पुनर्जन्म सच है तो आगे को हम सहारा के रेगिस्तान में जन्मै और वहां स्वच्छन्द रहैं पर गुलामी निगड़ित हिन्दुस्तान की पाप पृथ्वी में न पैदा हों। शिक्षित और अशिक्षितों में यही अन्तर है

अशिक्षित जिन के नेत्र नही खुले और जिन की नस २ में गुलामी व्याप रही है "कोउ नृप होहि हमे का हानी । चेरी छोड़ न होउब रानी" वाली कहावत आगे किये भूत और भविष्य का कुछ खयाल न कर बर्तमान् पर सन्तुष्ट अपने हिन्दू धर्म की श्रेष्टता और बिगड़ी हुई रीति नीति को सर्बोत्कृष्ट मानते हुये इस गुलामी में भी फूले नहीं समाते। हमारे प्रभुओं की श्री वृद्धि और यावत् ऋद्धि सिद्धि सब हमारी बदौलत है । प्रभुवरों की अन्तरात्मा मे भी यह बात खचित न हो सो नहीं है किन्तु लक्ष्मी मद और प्रभुता का मद ऐसा प्रबल है जिस से इस की उपेक्षा उन्हें है । पार्लियामेंट महा सभा में अपने यहां की तुच्छ सी तुच्छ बातों पर बड़ा बाद बिवाद होता है यहां की भारी सी भारी बात जिस पर करोढ़ों मनुष्यों की हानि लाभ और जीवन मरन आटिका है कर्मचारियों के हाथ में रख दिया गया है पार्लियामेंट को उसकी खबर तक नहीं होती । स्वार्थ ऐसा ही है जो जानते हुये को भी अजान कर देता है। अथवा यह पश्चिमी सभ्यता का परिस्कार हो । तब तो जितना ही उधर सभ्यता का प्रकाश प्रद्योतित होता जायगा उतना ही यहां दरिद्रता का सूची भेद्य अन्धकार विस्तार पाता रहेगा । हे अशरण शरण ! अनाथ नाथ लोक नाथ पद पल्लव शरणागत प्रति पालक ! यदि तुम हम सबों को वर्तमान् दीन दशा से उबारा चाहो तो हमारे प्रभुओं को बुद्धि प्रदान करो कि वे अपनी भूल सुधारें ॥

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ सं० ६	प्रयाग	जून सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार

पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से

यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥ु)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द की जिल्द मै पोस्टेज ३)

—:००:—

जि० २८ } प्रयाग { जून
सं० ६ } { सन् १९०६ ई०

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।

"बल हीन अपने आपे को नहीं पा सक्ता" पहले के ऋषियों का यह अनुभूत सिद्धान्त कि दुर्बलेन्द्रिय तथा क्षीण बल आध्यात्मिक उन्नति में सब भांत असमर्थ है बहुत ही उपयुक्त है। यह अध्यात्मिक उन्नति एक उपलक्षण मात्र है अपिच संसार के जितने काम है निर्बल किसी मे कृत कार्य नहीं होता। पूर्वज ऋषि निश्चितमेव हमारे समान न थे नहीं तो इस सिद्धान्त पर इतना ज़ोर न देते। गवर्नमेंट से ज़रा २ सी बात के लिये गिड़गिड़ाने और पुकार मचाने में, कि हमारे साथ न्याय नहीं किया जाता और अत्यन्त लौलीन हैं कि नीति का बर्ताव किया जाय, यह सब हमारी असामर्थ्य और दुर्बलता का मानो इश्तिहार है।

शासन कर्ताओं का जो ढंग शासन करने का है, उस से यह कभी संभव नहीं कि राजा प्रजा दोनो में मेल रहे और दोनो एक दिल तो कभी होंहीगे नहीं। अपने में बल संपादन की चेष्टा भी जहां शासन कर्ताओं के आंख का काटा है, तहां यह आशा करना कि शासक अपनी नीति से मुहमोड़ हमें कभी को इतना बलवान् कर देंगे कि हम अपना शासन अपने आप करने लगैं नितान्त भूल है। सच तो यों है कि इस नीति का टटोलना भी सहज नहीं है इस का मर्म वेही समझ सक्ते हैं जो दूसरे की पालिसी के उद्घाटन में प्रवीण और पटु बुद्धि हैं। जब देखा गया कि दीन भारत वासियों की गोहार अन्तिम सीमा तक पहुंची और समझा कि निठुराई की परा काष्ठा है, अब बिना कुछ किये कायल हो जाना पड़ेगा तब दो एक कोई ऐसी छोटी सी बात फुसलाने के ढंग की कर दी गई जिस में इन का आंसू पुछ जाय। परिणाम या फल उसका बहुत ही थोड़ा रहेगा पर आडम्बर और फैलाव इतना अधिक कि देखने वाले को यही मालूम होगा कि अब हमें किसी बात की कमी न रहेगी, राजा इन्द्र के सगे भाई बन बैठेंगे। जैसा दो एक छात्र वृत्ति कायम कर दी गई। एक आध छोटे मोटे ओहदे दे दिये गये। अथवा कोई कारखाना खोल दिया गया। सो भी वही तिल से तेल निकालने की भांत, विलाइत का रुपया यहां आवै सो नहीं बल्कि उस से भी यहां की पूजी विलाइत ढो जाय। समाचार पत्र बर्षों तक हौरा मचाये थे कि योग्यतम हिन्दुस्तानी कौंसिल में क्यों नहीं लिये जाते? उन के चिल्लाने पर ध्यान दिया गया गोखले सरीखे देश हितैषी कौंसिल के मेम्बर होने लगे। किन्तु उनकी मेम्बरी से लाभ क्या? इस साल बजट में सैनिक विभाग के व्यय के संम्बन्ध में बड़ी लम्बी स्पीच गोखले ने दी और अच्छी तरह उस का प्रतिवाद किया पर क्या फल हुआ? "हूै है वही जो राम रचि राखा" हुआ वही जो पहले से ते था। पहले की आपेक्षा अब देश कितना

क्षति ग्रस्त हो गया और प्रति दिन अधिक २ धन हीन होता जाता है, इसका कभी शासकों को खयाल नहीं होता। वास्तविक भलाई तो तब समझी जाती कि खेती में लगान कम कर दिया जाता। उचित शिक्षा में जो बहुत तरह के अड़चन छोड़ दिये गये हैं उठा दिये जाते। शासन के बड़े २ कामों में हमारी राय ली जाती। बड़े २ ओहदे भी वैसाही जी खोल के दिये जाते जैसा अपने मुल्की आदमियों को देते हैं। अकाल जो दूसरे तीसरे वर्ष आ घेरता है और लाखों मनुष्य भूखों मर जाते हैं सो इस से नहीं कि यहां उपज की कमी है। किसी एक प्रान्त में भी भरपूर पैदावार हुई तो वह समस्त देश भर को अन्न पहुंचा सक्ती है। किन्तु दरिद्रता के कारण पास पैसा न रहने से अन्न खरीद नहीं सक्ते लाखों आदमी भूखों मर जाते हैं। राज कर्मचारी अच्छी तरह जानते हैं कि हमारी शासन प्रणाली भारत के लिये अति भयंकर है परन्तु कोई इस बारे में कुछ किया नहीं चाहता सो इसीलिये कि ये दुर्बल हैं करी क्या सक्ते हैं। बराबर देख रहे हैं इन्हें जहां तक दबाते हैं दबते चले जाते हैं तब क्यों हम अपने स्वार्थ से चूकैं॥

किसी के साथ किसी की प्रीति या हमदरदी के कई कारण होते हैं। ममता जैसा पिता को पुत्र के साथ है; घनिष्ट सम्बन्ध लगाव या अधिक घिष्टपिष्ट जैसा दो मित्रों में रहती है; या हम से तुम्है कुछ भय हो तब तुम हम से लाचार हो प्रेम करोगे "बिन भय होहि न प्रीति" यहां तीनों में कोई बात न ठहरी तब हमारे शासकों को क्या पड़ी है जो हमारे साथ उन्हें हमदरदी हो। केवल इतना ही कि ये येन केन किसी तरह जीते रहैं जिस में इन से हमारी सेवा टहल का काम निकलता रहे किन्तु वित्त तथा बल में न बढ़ने पावें नहीं तो ये फिर हमारे चंगुल के बाहर हो जांयगे। पर यह उनकी ना समझी है भारतीय प्रजा सदा से राज भक्त रही और एहसान फरामोश नहीं है; कृतज्ञता तथा किये उपकार को कैसे मानना होता है सो भरपूर यहां

के लोग समझते हैं; कई बार कई तरह पर इसका उदाहरण भी उन्हे मिल चुका है तब भी ये अपनी कुटिल नीति को जो नहीं भूलते सो इसमें या तो इनका अभाग्य है या कोई अनिष्ट होनहार है या स्वार्थ की बासना इतनी प्रबल है जो इन से यह सब करा रही है। अस्तु अब रहा बल का संपादन सो उसका यहां सर्वथा अभाव तो नहीं है पर अनेक कारणों से जैसा धीमी चाल से हम आगे बढ़ने का मन कर रहे हैं वह इतना अल्प है कि उसे हम न होने के बराबर कहेंगे। पहले तो सामाजिक अनेक बन्धन, रिवाज की गुलामी, Ovarious social ties; Slavery of custom जाति पाति के अनेक झगड़े हमारी दीर्घ निद्रा को भंग नहीं होने देते। कोई २ जो इस तरह की भांत २ की रुकावटों को कुछ न मान अपने मुल्क वालों में बल संपादन की चेष्टा में प्रवृत्त हुये तो वहां राजकीय कोई ऐसा अड़चन लग जाता है कि यावत् चेष्ठा और यत्न सब बिफल होता है। सिविल सरविस इत्यादि की परीक्षा इसके उदाहरण हैं; अन्त जिसका यही कहेंगे कि यही सब हमे दुर्बल किये है॥

संसार में भलाई अधिक है कि बुराई।

एक हमारे मित्र का यह सिद्धान्त कि सर्वथा न कुछ भला है न सर्वथा बुरा है; किन्तु ९ और ७ भलाई और बुराई की कसौटी है। अर्थात् जिसमें और जहां ९ आना भलाई का अंश है ७ आना बुराई का वह भला है और जिसमें भलाई केवल ७ आने है बुराई ९ आने वह बुरा है। तो अब देखना चाहिये संसार में भलाई का अंश विशेष है कि बुराई का? पाप अधिक है वा पुण्य? स्वास्थ्य अधिक है या व्याधि? आनन्द और आमोद प्रमोद अधिक है अथवा शोक और विषाद? धर्म रुचि अधिक हैं या पाप रुचि? चोर और बेइमान

अधिक हैं या ईमानदार और पर धन को मिट्टी का ढेला समझने वाले? हिंसक और निठुर अधिक हैं या दयावान् और पर दुख दुखी? यद्यपि प्रत्येक मत और संप्रदाय के नेता जैसा हिन्दुओं में ब्राह्मण मुसल्मानों में मोलवी इसाइयों में पादरी साहब यही पुकार २ कह रहे हैं और सिद्ध करते हैं कि पाप संसार में अधिक है। इस पाप के लिये यह दान करो तो पाप से छुट जाओगे नहीं तो नरक में जा गिरोगे। मोलवी लोग कहते हैं महम्मद साहब को अपना पेशवा मानोगे तो गुनह से छुटकारा पाओगे नहीं तो दोज़ख की आग में तुम्हारी रूह सदा के लिये पड़ी २ झुलसा करेगी। ऐसाही पादरी साहब कहते हैं कि खुदावन्द प्रभु ईसा पर विश्वास लाओगे तो कयामत के दिन रिहाई पाओगे इत्यादि इत्यादि। विविध संप्रदाय प्रवर्तक अलग २ अपनी २ तान अलाप डेढ़ चावल की खिचड़ी जुदा २ पका रहे हैं कि संसार में निरा पापही पाप है। इस कलियुग में पुण्य और धर्म कहीं२ केवल नाम को बच रहा है। ये सब ऐसा कहा चाहें न कहें तो उनका भोजन कैसे चले और उन्हें पूछे कौन? जो अपने भाई तथा परोसी को ठगते हैं, अनेक जाल और फरेब रचने में प्रवीण हैं, कानूनों के पेच समझने में चतुर अदालत में एक न एक नये तरह का मुकद्दमा दायर किया करते हैं उनकी संख्या संसार में अधिक है या उनकी जो निज परिश्रम से उपार्जन कर अपने घर गृहस्थी का काम चला रहे हैं? ईसा ने अपने शिष्यों को शिक्षा देने में एक ठौर कहा है वह रास्ता जो नरक को गई है बड़ी चौड़ी है और करोड़ों मनुष्य उस पर चलते हैं। हम कहें गे सो नहीं जो मार्ग स्वर्ग जाने का है बड़ा चौड़ा सीधा और सरल है असंख्य मनुष्य उस पर चल स्वर्ग के साम्राज्य के अधिकारी हैं। जो पन्था नरक की है अत्यन्त सकेती संकुचित टेढ़ी और अन्धकार पूर्ण है। ऐसाही कोई साहसी उस पर चल अपने को नरक का पाहुना बनाता है। युग धर्म इतना प्रभावशाली नहीं है जैसा

भीरु हृदय हमारे पुराने लोग कलियुग है ऐसा बार २ कह निश्चय किये बैठे हैं कि हम लोग नित्य २ बिगड़ते ही जांयगे, येन केन हम अपनी ज़िन्दगी का दिन काट पूरा करैं बस हो गया। हम उन से केवल इतना ही पूछते हैं कि क्या अमेरिका और यूरोप के देशों में तथा हमारे परोसही में जापानीज़ हैं क्या वहां यह युग धर्म नही व्यापता? युग धर्म निगोड़ा भी क्या वही हते को हतता है? अकिल घुन गई तो क्या हुआ पलित केश बयो वृद्ध होने से माननीय हैं; जो कहैं चुप चाप सुन लेना ही पड़ता है। संसार में साधुभाव और भलाई स्वभावतः यदि अधिक न होती तो समाज एक दिन न चलती और यह जगत् जीर्णारण्य हो गया होता। सौ मनुष्यों में ९९ दुराचारी और पापी हैं केवल एक आदमी धर्म शील और सुकृती है तो उस एक के कारण सौ मनुष्यों की रक्षा रहती है। तात्पर्य यह कि जब तक अणु मात्र भी भलाई का अंश किसी वस्तु या किसी व्यक्ति में रहता है तब तक सर्वांश उसका सत्यानाश ईश्वर नहीं करता। जब सोलहौ आने बुराई देख लेता है तब उसे जड़ पेड़ से उच्छेद कर देता है। ब्रह्मास्मि कहनेवाले अद्वैतवादियों का सिद्धान्त है कि बुरा और भला दोनो एक सा है; न कुछ बुरा है न भला; अपने को जो अनुकूल वह भला अपने को प्रतिकूल वह बुरा; पर यह उनका कथन बेबुनियाद सा मालूम होता है, जिस समय कोई रोग प्रजा में फैलता है तो वह मोसिम किसी को अनुकूल नहीं होता किन्तु वैद्य और डाक्टरों को वही अनुकूल और लाभदायक है। डाक्टर यही चाहते होंगे कि रोग की वृद्धि सदा ऐसा ही होती रहे तो हमारी जेब भरी रहा करे। एक किसी खास आदमी या किसी खास फिरके वाले को अनुकूल वेदनीय तथा प्रतिकूल वेदनीय भला या बुरा होने का हेतु नहीं है बरन इस में भी वही ९ और १ का क्रम उचित मालूम होता है। तस्मात् यह सिद्ध हुआ कि भलाई का पलरा बुराई की अपेक्षा

सदैव अधिक भारी रहता है। जब तक भलाई का पलरा भारी है तभी तक इस विश्व की अद्भुत रचना कायम है॥

दिल बहलाव।

एक पण्डित जी अपने लड़के को पढ़ा रहे थे "मातृवत् परदारेषु" पर स्त्री को अपनी मा की बराबर समझे। लड़का मूर्ख था कहने लगा। तो क्या पिता जी आप मेरी स्त्री को माता के तुल्य समझते हैं? पिता रुष्ट हो बोला मूर्ख आगे सुन "परद्रव्येषु लोष्टवत्" पराये धन को मिट्टी के ढेले के सदृश समझे। लड़का झट बोल उठा। चलो कचालूवाले का पैसा ही बचा। पण्डित जी ने कहा। श्लोक का अर्थ यह नहीं है पहले सुन तो ले। लड़के ने कहा यहां तक तो मतलब की बात थी अच्छा आगे चलिये। पण्डित जी ने फिर कहा। "आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति सपण्डितः" अपने सदृश जो औरों को देखता है वही पण्डित है। लड़का कुछ देर सोच के बोला। पिता जी तब आप कलुआ मेहतर के लड़के के साथ खेलने को हमें क्यों रोकते हैं। इस पर पण्डित जी ने उसे हज़ार समझाया पर वह अपनी ही बात बकता गया॥

एक शख्स ने एक बड़े आदमी को उर्दू में दरखास्त लिखी "खुदा हुजूर की उम्र दराज़ करे हुजूर की नज़र गुरबा परवरी पर ज्यादा है इससे उम्मेद है कि हुजूर मुझ पर भी नज़रे इनायत रक्खें" उसने अपने मुन्शी को हुकुम दिया इस दरखास्त को पढ़ो मुन्शी ने दरखास्त इस तौर से पढ़ी "खुदा हुजूर की उमर दराज़ करे हुजूर की नज़र गुर पापर बरी पर ज्यादा है इससे उम्मेद है हुजूर मुझ पर भी नज़र इनायत रक्खें"॥

एक स्कूल मास्टर हाथ में बेंत लिये हुये लड़के पढ़ा रहे थे बेंत सीधा कर बोले। हमारे बेंत के कोने के रूबरू एक गधा बैठा है। वह

लड़का जो बेंत के रूबरू बैठा हुआ था बड़ा ढीठ था फ़ौरन कह उठा मास्टर साहब बेंत के दो कोने होते हैं आप किस कोने का ज़िकर करते हैं। मास्टर बेचारे शरमिन्दा हो चुप हो गये ॥

हमारी मृग तृष्णा ।

अनन्त असीम मरूस्थली में भटक कर गया हुआ बटोही जैसा दूर से चमकती मरु मरिचिका देख जलाशय के भ्रम से दौड़ता हुआ व्याकुल हो गिर पड़ता है। वैसा ही हम दुःख दारिद्र प्रपीड़ित हो आशा मरीचिका के पीछे दौड़ रहे हैं। एक दिन दो दिन नहीं एक मास दो मास नही अपिच डेढ़ सौ बर्ष के ऊपर हो गये पर उस अनन्त असीम आशा मृग तृष्णा का अन्त न मिला । मन में यही भावना रही कि कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ जगत्तारक ने हम लोग समस्त भारतीय प्रजा के उद्धारार्थ श्वेतद्वीप निवासियों को देव दूत बना कर भेजा है और ३० करोड़ प्रजा का धन प्रान जीवन उनके हस्तगत कर दिया है। स्वाधीनता प्रिय ये श्वेत द्वीप निवासी .यहां की अशिक्षित जनता को दासत्व की शृङ्खला से मुक्त कर देंगे और भारत को उन्नति के उच्च शिखर पर स्थापित कर देंगे। महामति मेकाले अपने एक लेख में इस तरह का विकत्थन कर भी गये हैं कि ब्रिटेन निवासियों का यहां पदार्पण करना यहां वालों का सौभाग्य है। हम मेकाले के विकत्थन की प्रतीक्षा करते बराबर दिन गिन रहे हैं। किन्तु भारत के दिष्टाकाश में उस सौभाग्य सहस्रांशु का अब तक उदय न हुआ वरन वह सौभाग्य सूर्य निविड अन्धकार पूर्ण तिमिर राशि में ऐसा तिरोहित हो रहा है कि कहीं टटोलने से भी उस का पता नहीं मिलता । भारत के प्राचीन नृपति गण प्रजा को पुत्र निर्विशेष पालन करते थे और प्रजा रंजन अपना श्रेष्ठ धर्म मानते थे

अब के समान राजा का स्वार्थ प्रजा के स्वार्थ का प्रतिद्वन्दी न था ; प्रजा में अमंगल और अशान्ति फैलने से राजा नरकपात की डर से अधीर हो जाता था। प्रजा भी इसी लिये परम राज भक्त होती थी। यह वही भूमि है जहां राजा प्रजा के सन्तुष्ट करने को अपना सर्वस्व सुख त्याग देते थे–

स्नेहं दयां च मैत्रींच यदिवा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्तिमे व्यथा॥

चिर काल से परं परागत अभ्यास वश वर्तमान् शासकों की इतनी स्वार्थ निष्ठा और इतने विषम भाव पर भी प्रजा की भक्ति राजा की ओर नहीं कम होती। राज कुमार प्रिन्स आफ वेल्स ने विलाइत पहुंच अपनी स्पीच में यहां के लोगों में राज भक्ति की बड़ी प्रशंसा की है। जिस पर पायोनियर को हृदय के शूल सदृश पीड़ा पैदा हुई और जो मन में आया हम लोगों को कह सुनाया। हमारी थोथी तारीफ भी जिसे न सुहाई तो उस से बढ़ कर बुरा चाहने वाला शत्रु हमारा दूसरा कौन होगा। राज कुमार के उस कथन पर पायोनियर ज़रा भी न सनका जहां पर उन्हो ने अंगरेज़ों की बड़ी तारीफ के साथ यह कहा कि "ये हिन्दुस्तान के शासन में बड़ा परिश्रम करते हैं" राज कुमार चार दिन के लिये यहां आये थे भीतरी बातें उन्हें क्या मालूम, यह उक्त श्रीमान् क्या जानै कि उनके देश वासी यहां मन माना गुलछर्रे उड़ाते रहते हैं। एक २ कर्मचारी जब यहां से लौट विलाइत जाते हैं तो नौवाब बन यहां से विदा होते हैं। विलाइत में चाहो कुली कबारी भी रहे हों पर यहां आय हुजूर बन जाते हैं। अस्तु प्रथम जब ब्रिटिश राज कर्मचारी यहां आये तब यहां के लोग बिना किसी छल छिद्र शासन की डोर इनके हाथ पकड़ाय सुख से अपने कालयापन की आशा करने लगे। निर्विघ्न जीवन यात्रा तथा सार्वजनी

न सामाजिक उन्नति के लिये राज पुरुषों का मुह जोहते रहे। उस समय यह कभी नहीं सोचा गया था कि राज कर्मचारी निज स्वार्थ के लिये हमारे स्वार्थ के प्रतिद्वन्दी होंगे। किन्तु यह आशा मरु मरीचिका सी दुराशाही हुई। फिर भी ईश्वर का धन्यवाद है कि भ्रान्त और मायामुग्ध यहां के लोगों को उसने सुसमय से चैयन्यता का संचार करा दिया। चतुर लोगों की चातुरी का भेद खुलने लगा, नहीं तो हम उस मरु मरीचिका के पीछे कब तक धावमान रहते सो कौन जान सक्ता है। आघात पर आघात सहती हुई सुषुप्ति अवस्था में निद्रित इस जाति की अब भी जो कुछ २ निद्रा भंग होने लगी इसे कल्याण ही समझना चाहिये। हम पहले कह आये हैं निर्बल का किया कुछ नहीं होता, अब भी हम लोग अपने स्वरूप को पहचान लें और पूर्व पुरुषों के दिखाये पथ से मुह न मोड़ आत्म गौरव और आत्मोत्कर्ष बिधान में तन मन से तत्पर हो जांय तो इस मृगतृष्णा के पार हो जा सक्ते हैं। नहीं तो मरुस्थली में भ्रमण सदृश केवल कर्मचारियों पर अपनी भावी उन्नति के लिये निर्भर रहना नितान्त भूल है। लार्ड कर्ज़न का धन्यवाद है जो हमारे नेत्रों में न जानिये कौन सा तीव्र अंजन लगाय यहां से विदा हुये और हमे अच्छी तरह देख पड़ने लगा कि हम सर्वथा मरु मरीचिका में भ्रमण कर रहे हैं। लगातार ऐसा ही दो तीन वाइसराय इन्ही के सदृश आते रहें तो हम पूरी तरह सचेत हो जांय और यह मरु मरीचिका भी अपने ओर छोर को पहुंचे।

आदि मध्य अवसान।

सकल सर्जित पदार्थ जो वेदान्त दर्शन के सिद्धान्त अनुसार जीव कोटि में गिने गये हैं और जिनका जीव कोटि से किसी तरह का सम्बन्ध है उनकी आदि मध्य अवसान यह तीन अवस्था है। इन तीन

अवस्थाओं में आदिम और मध्यम अवस्था सदा स्पृहणीय और मन को हरने वाली है। अवसान अर्थात् अन्तिम अवस्था ऐसी ही किसी की सोहावनी होती है वरन अन्त की अवस्था बड़ी घिनौनी रूखी और किसी के उपकार की नहीं होती। आरंभ या आदि हर एक का बहुत कुछ आशा जनक और मम भावना होता है, मध्यम या प्रौढ़ अवस्था उसी आशा को फलवती करने वाली होती है। पौधा जब लगाया जाता है या बीज जब प्रस्फुटित हो प्ररोह के रूप में रहता है उस समय कटैले वृक्ष भी सुहावैने लगते हैं। प्रौढ़ अवस्था कुसुमोद्गम के उपरान्त फलों से लद जाने की है। पुराना पड़ने पर वही पेड़ जब कम फलने लगता है बाग के माली को उसके बढ़ाने या सींचने की वैसी मुस्तैदी नहीं रहती जैसी नये पौधों के लिये। जीव धारियों में देखो तो दूध मुहा शिशु मनुष्य का हो या किसी जानवर तथा चौपायों का हो ऐसा प्यारा लगता है कि यही जी चाहता है कि नेत्र उसकी मुग्ध मुखच्छबि को अनिमेष दृष्टि से देखता ही रहे। वही तरुणाई की प्रौढ़ अवस्था आते ही जवानी की नई उमंग में भरा हुआ दर्पान्ध कोई कैसा ही कठिन काम हो उसमें भिड़ जाता है और जब तक कृत कार्य न हो उससे मुह नहीं मोड़ता। नस २ में जब कन्दर्प अपना चक्रवर्तित्व स्थापित कर देता है तब कुरूप भी सुरूप, निर्जीव भी सजीव बोध होता है। सुषमा की यावत् सामग्री सब सोलहो कला पूर्ण हो जाती है। लवनाई और सलोनापन अपनी सीमा को पहुंच जाता है। कहा भी है। "प्राप्ते च षोड़से वर्षे शूकरीप्यप्सरायते" यही समय ऐसे अलहड़पने का होता है कि इस में यावत् प्रलोभन सब उमड़ २ उधरही आ टूटते हैं। इस तरुणाई की कसौटी में कस जाने पर जो कहीं से किसी अंश में न डिगा चरित्र की बिजय बैजयन्ती उसी के गले का हार होती है। अबसान में जब यह प्रौढ़त्व बिदा हुआ तब वह सलोनापन न जानिये कहां जा छिपता है। गाल युवक

जाते हैं बगुला की चोंच सी लम्बी नासिका; खोड़हा मुह; सूप से लम्बे २ कान; गंजा सिर कैसा बिलखावना मालूम होता है कि प्रेत के आकार सदृश देखते भय गपजता है। शुष्क चर्म पिनद्ध अस्थि शेष कंकाल वीभत्स का साक्षात्कार सा किसे न विभीषिका और घृणा पैदा करता होगा। ऐसा ही हमारे प्राचीन आर्यों की सभ्यता का जब उदय था उस समय उसकी बाल्य अवस्था थी, उस समय जो २ प्राकृतिक घटनायें Natural phenamena उनके दृष्टि पथ की पहुनाई में आईं उन्हें दैवी गुण विशिष्ठ, मनुष्य शक्ति वाहय और इन्द्रियातीत ममर्फ ईश्वर मान उनकी स्तुति करने लगे। जैसा ऋग्वेद में Dawn उषा को देवी कह उसकी कमनीय कोमल मूर्ति के वर्णन में कवित्व प्रतिभा को छोर तक पहुंचा दिया। इसी तरह सूर्य में गरमी और उसका विशाल बिम्ब Horizen क्षितिज से ऊपर। को उठते देख, सूर्य की गरमी और प्रकाश से पौधों को उगते और बढ़ते हुये पाय चिरकाल तक तमारि सूर्य ही का सविता अर्यमा आदि विशेषण पदों से गुण गान करते रहे। "उद्वयं तमसस्परिस्वः" इत्यादि कितनी ऋचायें हैं जिन्हें सन्ध्योपासन के समय हम नित्य पढ़ा करते हैं। इसी तरह मेघमाला में दृश सौहृदा विद्युत की चमक दमक देख ऐरावत और इन्द्र इत्यादि की कल्पनाओं से उनमें दैवी शक्ति का आरोप कर उन २ घटनाओं का अनेक गुण गान करते रहे। पीछे जब उनकी सभ्यता अपनी प्रौढ़ दशा में आई तो आत्मा तथा सृष्टि के आदि कारण का जैसा उन्हों ने पता लगाया वैसा अब तक न किसी प्राचीन जाति को सूझा, न ऐसी आध्यात्मिक उन्नति के शिखर पर कोई आधुनिक सभ्य जाति पहुंची। दर्शन शास्त्रों की जुदी २ प्रक्रिया; संस्कृत सी लोकोत्तर परिस्कृत भाषा; संगीत; कविता; आदि अनेक कौशल का आविष्कर और उनकी परमोन्नति की गई। Simple living and high thoughts साधारण जीवन और उत्कृष्ट विचार इन्हीं आर्यों में पाया गया। अब उस सभ्यता का अवसान है। पहले यावनिक

सभ्यता ने इसका दलन किया सब तरह पर इसे चूर२ कर डाला अब बिदेशी सभ्यता इसे पराभव देते हुये देश में सब ओर अपना प्रकाश कर रही है। बैदिक सभ्यता का अवसान होने से उनके मूल आधार ब्राह्मण ब्राह्मत्व से च्युत हो गये, चातुर बर्ण तथा चार आश्रम की प्रथा छिन्न भिन्न हो गई, संस्कृत का पठन पाठन लुप्त प्राय हो कहीं २ थोड़े से ब्राह्मणों ही में रह गया। आधुनिक नूतन सभ्यता और शिक्षा जो इस समय अपनी प्रौढ़ अवस्था में है उसका पहिला उद्देश्य यही है कि जहां तक जल्द हो सके ऊपर कहे मूल आधारों का कहीं नाम निशान भी न रहने पावे। जिस घराने में दस पुश्त से अविच्छिन्न पठन पाठन संस्कृत का रहा आया और एक से एक दिग्गज पण्डित और ग्रन्थकार होते आये वहां अब अंगरेज़ी जा घुसी। उस कुल के विद्यमान बंशधर अब ब्राह्मण बनने में शरमाते हैं। अपने को पण्डित कहते वा लिखते रुकते हैं। मिस्टर वा बाबू कहने में अपनी प्रतिष्ठा समझते हैं। कहीं २ तो यहां तक संस्कृत का लोप देखा जाता है कि उनके घर की पुरानी पुस्तकें दीमक चाट गये। लड़कों में एक भी इस लायक न हुआ कि साल में एक बार पुस्तकों के बस्तों को खोलता और उन्हें उलट पुलट सौंत के रखता। नूतन सभ्यता यहां तज पांव फैलाये हुये है कि वे जो पुराने क्रम पर हैं बेअकिल समझे जाते हैं, सभ्य समाज में उनकी हंसी होती है॥

हम ऊपर कह आये हैं अवसान भी किसी २ का सोहावना होता है। जैसा शीत काल का अवसान पूस माघ के जाड़ें में ठिठरे हुओं को फागुन के सुहावने दिन कैसे भले मालूम होते हैं। ऐसा ही जेठ मास की तपन के उपरान्त जब बरसात आती है और बर्षा के उपरान्त शरद्। जाड़ा गरमी बरसात इन तीनों की मध्य अवस्था या प्रौढ़त्व किसी को नहीं रुचता आदि और अवसान सबी चाहते हैं। किसी उत्सव या तिहवार का आगमन या मध्य भाग बड़े खुशी का होता है

अन्त नहीं। अंगरेज़ी राज्य का आदि बड़े सुख का रहा प्रौढ़ता सब तरह दुखदायी हो रही है। सुहृद सरल चित्त मित्र के समागम का आदि और मध्य बड़ा सुखदायी है अन्त या बिछोहा शोक बढ़ाता है। गीता में भगवान् ने उत्तम उसी को ठहराया है जो आदि मध्य अवसान तीनो में सुखद हो जिसका आदि और मध्य तो अच्छा हो पर परिणाम में दुख मिले वह राजसी और तामसी है। आदि मध्य अवसान तीनों में जो एक से रहते हैं बिमल ज्ञानियों में वही हैं। आदि और मध्य चाहो जैसा रहा अन्त बना तो सब बना कहा जाता है॥

आय व्यय।

आय और व्यय को अलग २ बिभाग करने में आय हम उसे कहेंगे जो पास न हो बरन दूसरे से अपने को मिले। व्यय वह है जो अपने पास से दूसरे के पास चला जाय। खेती तिजारत और नौकरी साधारण रीति पर आय के ये ३ बड़े द्वार हैं। सिवाय इसके मुल्क की दौलत के बढ़ाने के द्वार और भी कई एक हैं। जैसा हर एक तरह की खानों का अधिक होना, धरती की पैदावार; बाणिज्य, दस्तकारी; ऊंचे २ पदों पर देश के लोगों का नियत होना; "एक्सपोर्ट" अर्थात् अपने देश की पैदावार या दस्तकारी का दूसरे देशों में जाना और उसके बदले नगदी रुपया का अपने यहां आना इत्यादि। इङ्गलैण्ड जरमनी जापान फ्रान्स आदि देशों में आय के ये जितने द्वार हैं सब बे रोक टोक खुले हैं। जिस देश में आय के द्वार इतने एक हैं वहां दौलत और भागवानी के प्रति दिन बढ़ते जाने में कौनसा सन्देह है। जहां आय के द्वार कम हैं जो हैं भी उन्मे हट्ट बांध दी गई है और व्यय के द्वार सौ छेद वाले घड़े के समान अनेक और अनगिनत हैं वहां सौभाग्य और संपत्ति की छाया का भी पड़ना कैसा बरन लक्ष्मी

की जेठी बहिन दरिद्रा का चिर निवास अवश्यमेव निश्चित है। अब हम अपने देश के आय तथा व्यय का हिसाब लगाते हैं। देश का सब से बड़ा आय धरती की उपज है। इस में सन्देह नहीं उपज में बह सब देशों की आय से आगे बढ़ा है; जुदे २ मुल्क या जुदी २ आबो हवा की ऐसी ही कोई पैदावार बची है जो यहां नहीं उपज सक्ती केवल उपज ही नहीं बरन बहुतात भी उस की यहां हो जा सकती है। किन्तु सरकारी लगान इतना अधिक है कि देश के लिये उसका आय का द्वार कहते मन संकुचाता है। इसलिये कि इस आय का जो कुछ सारांश या हीर है वह बिलाइत ढो जाता है केवल मेहनत का हक्क मात्र हमे बच रहता है। फिर भी इस समय जब आय के और २ द्वार बन्द हैं केवल उपज अकेली बच रही जिस से इतना भी धन देश में देख पड़ता है। दूसरा आय बाणिज्य है सो उसमे पहले तो पूंजी इतनी न रह गई कि यूरोप और जापान की तिजारत के साथ हम Compete उतरा चढ़ी कर सकें किया भी चाहें तो धर्म आड़े आता है। यहां महाजन काल मनाते रहते हैं कि पंजाब का गल्ला दक्खिन पहुंचावें दक्खिन का बंगाल। ब्याज का परता फैलाते इतनी हिम्मत कहां कि बाहर कदम निकाल यहां की उपज दूसरे २ देशों में पहुंचावें और वहां का माल अपने यहां लाय जो फाइदा बिलाइत के एजेंट उठा रहे हैं उसे हम खुद हासिल करें। रूई सन पेटुआ आदि कच्चा बाना हम से खरीद बिलाइत के लोग उसका अठगुना हम से भर लेते हैं। उस कच्चे बाने में भी डूटी और जहाज आदि का महसूल दे दिवाय रुपये में एक आना अधिक से अधिक दोअन्नी रुपये से ज्यादा हमें नहीं मिलता। दस्तकारी में कल की बनी चीज़ों के मुकाबिले परता नहीं बैठता दूसरे अंगरेज़ी माल की चमक दमक और सुथरापन के मुकाबिले हाथ की बनी चीज़ें खुरखुरी और भद्दी जचती हैं। देश की पुरानी कारीगरी बिल्कुल रद्दी हो गई, जितने पेशेवाले कारीगर थे

सब अपना काम छोड़ बैठे उन्हें कोई पूछता नहीं, भूखों मरने लगे। दस्तकारी का भी जो कुछ आय था वह सब बिलाइत ने छीन लिया। बंगाल के टुकड़ा होने पर जो कुछ जोश फैला था वह चन्दरोज़ा हो कर्मचारियों के दबाने से टांय २ फिस हो गया। खानिक द्रव्यों की आमदनी का भी यही हाल है ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसकी खान यहां न हो, सोने और हीरे तक की खान यहां है पर उसका फाइदा भी बिदेशी उठा रहे हैं। मैसूर में सोने की खान है पर हमें क्या उसका भी सार विदेशी खीचे लेते हैं। लोहे की खान इतनी अधिक हमारे यहां है कि कदाचित् और देशों में न हों पर रेल इत्यादि में जितना लोहा लगता है सब बिलाइत से आता है। महाराणी का स्मारक चिन्ह जो हाल में यहां बना उसके लिये पत्थर भी इटली से मंगाया गया। अब रहा एक आय सरकारी नौकरी का उस में दो सौ के ऊपर वाली नौकरी प्रायः बिलाइत के लोगों को मिलती है १५ या २० की नौकरी जो पिसौनी है हमे दी जाती हैं। यह तो हमारे आय का हिसाब भया अब व्यय की ओर चलिये। आय के द्वार तो सब ओर से बन्द हैं व्यय के द्वार चारों ओर से खुले हैं॥

हमारे व्यय का क्या पूछना तैमूर महमूद गजनवी और नादिर के ज़माने से अब तक यहां सिवाय व्यय के और होता क्या आया। संग्रह तथा आय तो हमने कभी जाना नहीं संचित पूंजी का गवाना अलबत्ता जानते हैं। सब के पहिले धरती की मालगुज़ारी जो ५५ या ६० सर्कारी खज़ाने में जाता है १०० में ४६ या ४५ किसान तथा ज़मीदार के हाथ लगता है। मसल है "वह वह मरें बलवा बैठे खांय तुरंग" उसी ४० खाने पहिनने में खर्च; नाक लाज में खर्च न करें तो समाज में मुह दिखाने लायक न रहें; लड़की लड़कों के व्याह का खर्च; एक साल भी खेती न लगे तो मुह बाय बैठ रहें। भांत२ के टेक्स का खर्च; सर्कारी चन्दे का खर्च जो किसी न किसी बात के लिये साल में बहुधा कई

बार उगाहा जाता है, कलट्टर साहब ने कहा कैसे इनकार किया जाय। सिवा इसके तोहफे नज़र, हर साल एक न एक कोई दरबार। अदालत में स्टाम्प और सरकारी रसूमें का खर्च; अदला बदला; अभी हाल में कर्ज़न साहब चलती बार महाराजा बनारस को गन दै हाथी दांत का "फरनिचर" मेज़ कुरसी आदि बदले में ले गये। लड़कों के पढ़ाने में फीस का खर्च। चार आना लागत की किताब का एक रुपया दाम। सिवा इसके तिहवारों का खर्च। कोई महीना खाली नहीं जाता जिस में कोई न कोई तिहवार न आ पड़ते हों जिसमें गृहस्थ का चूर ढीला हो जाता है। सोचने की बात है कि जहां आय का द्वार इतना संकुचित और व्यय का कोई हिसाब नहीं है उस देश का कल्याण और वहां के रहने वालों की बेहया ज़िन्दगी का इतने पर भी ओर न हो यही अचरज है॥

परचित्तानुरंजन।

ऐसे पुरुष जो परचित्तानुरंजन में कुशल हैं अर्थात् जिनकी सदा चेष्टा रहती है कि हम से किसी को दुःख न मिले और कैसे हम दूसरे के मन को अपनी मूठी में कर लें। ऐसे पुरुष मनुष्य के चोला में भी साक्षात् देवता हैं, यह लोक और पर लोक दोनो को उन्हों ने जीत लिया। परचित्तानुरञ्जन या परच्छन्दानुवर्तन से हमारा प्रयोजन चापलूसी करने का नहीं है कि तुम अपनी चालाकी से "मूर्खं छन्दानुवृत्तेन" के क्रम पर भीतर तो न जानिये कितनी मैल और कूड़ा जमा है अपना मतलब गांठने को उस के मन की कह रहे हो, बरन अपना मतलब चाहो बिगड़ता हो पर उसका चित्त आजुर्दा न हो इसलिये जो वह कहे उसे कबूल कर लेना ही परचित्तानुरंजन है। दिल्ली का बादशाह नसीरुद्दीन महमूद ने एक किताब अपने हाथ से नकल की थी।

एक दिन अपने किसी अमीर को दिखला रहा था उस अमीर ने कई जगह गलती बतलाई बादशाह ने उन गलतियों को दुरुस्त कर दिया। जब वह अमीर चला गया तो फिर वैसा ही बना दिया जैसा पहिले था। लोगों ने पूछा ऐसा आप ने क्यों किया? बादशाह ने कहा मुझ को मालूम था कि मैं ने गलती नहीं किया लेकिन खैरखाह और नेक सलाह देने वाले का दिल दुखाने से क्या फाइदा इस से उसके सामने वैसा ही बनाय यह मेहनत अपने ऊपर लेनी मैंने उचित समझा। व्यर्थ का शुष्कबाद और दांत किट्टन करने की बहुधा लोगों की आदत होती है अन्त को इस दांत किट्टन से लाभ कुछ नहीं होता। चित्त में दोनों के कशाकशी और मैल अलबत्ता पैदा हो जाती है। बहुधा ऐसा भी होत है कि हमारी हार होगी इस भय से प्रतिबादी का जो तत्व और मर्म है उसे न स्वीकार कर अपने ही कहने को पुष्ट करता जाता है और प्रतिपक्षी की बात काटता जाता है। हम कहते हैं इस से लाभ क्या? प्रतिबादी जो कहता है उसे हम क्यों न मान लें उसका जी दुखाने से उपकार क्या। "फलं न किंचित् अशुभा समाप्तिः"। सिद्धान्त है "मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना तुण्डे तुण्डे सरस्वती" बहुत लोग इस सिद्धान्त को न मान जो हम समझे बैठे हैं उसे क्यों न दूसरे को समझावें इसलिये न जानिये कितना तर्क कुतर्क शुष्कबाद करते हुये बांय २ बका करते हैं फल अन्त में इसका यहीं होता है कि जी कितनो का दुखी होता है, मानता उसके कहने को वही है जिसे उसके कथन में श्रद्धा है। हमारे चित्त में ऐसा आता है कि जो हम ने तत्व समझ रक्खा है उसे उसी से कहैं जिसे हमारी बात पर श्रद्धा हो। मोती की लरियों को कुत्ते के गले में पहिना देने से फाइदा क्या? अस्तु हमारे प्राचीन आर्यों ने जो बहुत सी विद्या और ज्ञान छिपाया है उसका यही प्रयोजन है। जिसे इन दिनो के लोग ब्राह्मणों पर दोषारोपण करते हैं कि ब्राह्मणों ने विद्या छिपाया सबों को न पढ़ने दिया॥